ॐ

सत्‌नाम साक्षी

ब्रह्मदर्शनी

रचियता

सद्‌गुरु स्वामी टेऊँराम जी महाराज

ॐ

श्री सत्नाम साक्षी

ब्रह्म दर्शनी

रचयिता
श्री प्रेम प्रकाश मण्डलाचार्य पूज्यपाद ब्रह्मनिष्ठ
श्री श्री 1008 सद्गुरु स्वामी टेऊँरामजी महाराज

प्रकाशक
स्वामी भगत प्रकाश जी महाराज
प्रेम प्रकाश मण्डल (ट्रस्ट)
अमरापुर स्थान, जयपुर (राज.)

सर्वाधिकार सुरक्षित

सप्तम् संस्करण-1000

भेटा : 30 रूपये

फरवरी, 2012

प्रकाशक
स्वामी भगत प्रकाश जी महाराज
प्रेम प्रकाश मण्डल (ट्रस्ट)
अमरापुर स्थान, जयपुर (राज.)

मुद्रक : गणपति
जयपुर (राज.)
मो. 9828112907

भूमिका

प्रिय सज्जनो यह ब्रह्मदर्शनी ''श्री सत्गुरु स्वामी टेऊँराम जी महाराज के रचे हुए श्री प्रेमप्रकाश ग्रन्थ में'' छपी हुई है। सद्गुरु स्वामी सर्वानन्द जी महाराज ने प्रेमियों की सुगमता के लिये इसे अलग पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया जिसका षष्ठम् संस्करण आपके हाथों में है। इस पुस्तक का जैसा नाम है वैसा ही गुण है अर्थात् इसमें पूरा-पूरा ब्रह्मज्ञान भरा हुआ है। इसमें ज्ञान, वैराग्य, उपासना, प्रार्थनादि प्रत्येक विषय पर कुल पच्चीस दशपदियाँ हैं। जिसके पढ़ने, सुनने, मनन निदिध्यासन के करने से ब्रह्म साक्षात् अर्थात् ब्रह्मात्म की एकता का दृढ़ बोध होता है। एकता के बोध से अज्ञान सहित भेद भ्रमादि पांच भ्रान्तियां पांच क्लेश तीन गुण तीन तापादि सर्व अनर्थ रूप प्रपंच की निवृत्ति एवं परमानन्द की प्राप्ति होती है। इस ब्रह्म दर्शनी के मात्र पाठ करने से ही मन को शान्ति मिलती है और अनुष्ठान करने से मनोकामना भी पूर्ण होती है।

इसलिये नित्यप्रति नियम से स्नान करके श्रद्धा प्रेम से इसका पाठ करना चाहिये, क्योंकि इस पुस्तक की महिमा श्री गुरु महाराज ने स्वयं ही अन्तिम दशपदी के अन्त में लिखी है :-

ब्रह्म दर्शनी ज्ञान बतावे, पांचों भेद भ्रांति मिटावे।

ब्रह्म दर्शनी ब्रह्म दिखावे, सुख स्वरूप में सहज समावे।

ब्रह्म दर्शनी भव सिन्धु तारे, पाप ताप संताप निवारे।

ब्रह्म दर्शनी जोनित पढ़ता, बन्धन काट होय सो मुक्ता।

ब्रह्म दर्शनी धारे जोई, टेऊँ सब फल पावे सोई ॥

इस पुस्तक की विशेषता यह है कि इसमें सरल एवं मधुर हिन्दी भाषा में वेदोपनिषद् अनुसार उच्च ब्रह्मज्ञान भरा हुआ है जिसके पढ़ने-सुनने से अनायास ही मन निर्मल और ध्यान स्थित होता है।

अत: जिज्ञासू को चाहिये कि ब्रह्म साक्षात्कार के लिये नित्य प्रति श्रद्धापूर्वक इस ब्रह्मदर्शनी का पाठ करे।

ओम शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!

॥ ॐ ॥

श्री सत्नाम साक्षी

ब्रह्म दर्शनी

॥ दोहा ॥

कह टेऊँ कर जोड़ के, सुनिये कृपा निधान।
अवगुन कीने बहुत मैं, बख्श लेह भगवान॥ १ ॥

दशपदी (१)

हे प्रभु मुझ में गुण नहिं कोई, कैसे भगवन भावौं तोही।
विनय करत मुझ आवत लाजा, किया न कोई मैं शुभ काजा॥
जन्म पाय सुकृत नहिं कीना, उल्टा पापनि में चित दीना।
विषय भोग में समय गंवाया, साधुसंग में कभी न जाया।
मूण्ढ मती मैं कपटी खोटा, कह टेऊँ तव लीनी ओटा॥ १ ॥

अवगुन मेरे देख न स्वामी, दीन बन्धु तुम अन्तर्यामी।
जन्म जन्म का मैं अपराधी, एक पलक नहिं भक्ती साधी।
मैं हूँ बालक तुम पित माता, भूल सुधार करो कुशलाता।
जैसा तैसा दास तुम्हारा, चरन कमल का देहि सहारा।
प्रभू तुम बिन नहिं को मेरा, कह टेऊँ मैं जन हूँ तेरा॥ २ ॥

जो निज अवगुन सुमरन करता, स्मर स्मर मैं मन में डरता।
तो भी पाप नहीं मैं छोड़त, दिन दिन पापों में मन जोड़त।
कैसे हरि मैं मुक्ती पाऊँ, सोच सोच यह अति पछुताऊँ।
सर्व ओर ते होय निरासा, केवल कीनी तेरी आसा।
कर कृपा मोहि चरन लगाओ, कह टेऊँ निज नाम जपाओ ।। ३ ।।

अवगुन मुझ में बहुत अपारा, शेष कहे तो पाय न पारा।
अग्नि धरनि जल के जे किनके, हो सकता है लेखा तिनके।
पर मम दोषनि अन्त न पावे, कोटि कल्प जो गिनता जावे।
जग में जेते अवगुन भारी, से जानो मुझ माहिं मुरारी।
तुम हो बख्शन्द अति कृपाला,कह टेऊँ कर मोहि निहाला ।। ४ ।।

दास पड़ा है तोहि द्वारे, सर्व काल हो मम रखवारे।
भाव भक्ति से कर उर पूरन, काम क्रोध मत्सर कर चूरन।
माया का प्रपंच हटाओ, प्रभू अपने चरन लगाओ।
साधु संग दे हे भगवाना, जाँसे पाऊँ निर्मल ज्ञाना।
प्रभो ऐसी करुणा कीजे, कह टेऊँ मति हरि रस भीजे ।। ५ ।।

ऐसी मति दे तव मग चाले, ऐसी मति दे अवगुन टाले।
ऐसी मति दे सत्संग भावे, ऐसी मति दे तव गुन गावे।
ऐसी मति दे भेद मिटावे, ऐसी मति दे सहज समावे।
ऐसी मति दे भाणा माने, ऐसी मति दे हौं मैं हाने।
ऐसी मति दे हे भगवन्ता, कह टेऊँ तव जपे अनन्ता ।। ६ ।।

सबते ऊँचा भवन तुम्हारा, सबते ऊँचा तुम कर्तारा।
सर्व देव तव गीत उचारे, निगमागम भी गावत सारे।
योगी जपी तपी धर ध्याने, इक तिल भी तव अन्त न जाने।
हरिजन मुनिजन तव गुन गावत, गाय गाय बेअन्त बतावत।
कर कृपा यह अरज़ अघाना, कह टेऊँ मुझ दरस दिखाना ।। ७ ।।

भक्त वत्सल भगवान दयालू, करुणा मय तुम हो कृपालू।
सब जीवों के पालन हारे, चतुर पदारथ देवनि वारे।
कबहुँ न खूटे तव भण्डारा, दिन दिन दूना बढ़ने हारा।
तुम बिन दाता और न कोई, जो मांगे तिहँ देते सोई
अब लौं खाली को नहिं जाया, कह टेऊँ जो तुम दर आया ।। ८ ।।

भक्तों के तुम पीछे फिरता, बिन मांगे सब आगे धरता।
भक्तों का तुम साथ न त्यागत, जहँ जावहिं तहँ पीछे लागत।
भक्तों की तुम लाज बचावत, बिना कहे सब काज बनावत।
भक्तों के दुख में तुम दुखिया, तिन के सुख में रहते सुखिया।
भक्तों पर तुम हो कृपाला, कह टेऊँ तिन करत निहाला ।। ९ ।।

हे प्रभु मेरी सुन अर्दासा, सब घट करिये ज्ञान प्रकासा।
भेद भ्रान्ती सकल हटाओ, सब जन को निज रूप जनाओ।
अपनी निश्चल भक्ती दीजे, दर्शन दे निहाल सब कीजे।
साध संगति में देहि निवासा, पूरन करिये सबकी आसा।
सब जन का तुम संकट हरहो, कह टेऊँ यह कृपा करहो ।। १० ।।

॥ दोहा ॥

सब विधि समर्थ आप हरि, जग के सिरजनहार।
तव इच्छा से चलत है, कह टेऊँ संसार॥ २॥

दशपदी (२)

सकल भान्ति तुम समर्थ स्वामी, जो चाहत सो होत मुदामी।
तेरा कीया सब कछु होवत, लाख बार मैं प्रत्यक्ष जोवत।
सर्व देव दानव मुनि ज्ञानी, माया कार्य जहँ लग प्रानी।
तेरी आज्ञा सब पर चाले, कोय सके नहिं तांको टाले।
आज्ञा तेरी है प्रधानी, कह टेऊँ सबने शिर मानी ॥ १॥

आज्ञा मान धरनि थिर रहती, सब जीवों का बोझा सहती।
आज्ञा मान सलिल नित बहता, सब जीवों के मल को हरता।
आज्ञा मान अग्नि प्रकाशे, सब जीवों की तम को नाशे।
आज्ञा मान पवन नित चालत, सब जीवों को हरदम पालत।
आज्ञा माहिं रहत आकासा, कह टेऊँ सब दे अवकासा ॥ २॥

ब्रह्मा शंकर सूर्य गणेशा, नारद शारद शेष सुरेशा।
इत्यादिक जे देव अपारे, चलते आज्ञा में सब थारे।
सर्व प्रेरक आप अनन्ता, तुम्हरे वश है सब जग जन्ता।
आप स्वतन्तर बंध न कोई, होय रहा तुम चाहत जोई।
सर्व व्यापक सबके ज्ञाता, कह टेऊँ तुम सब फल दाता ॥ ३॥

जीव विचारे क्या कर साकत, पल पल प्रभो तुम को ताकत।
जीव अज्ञानी निर्बल आहीं, निज हित की कछु सार न जाहीं।
डोर जीव की तुम्हरे हाथा, सब जीवों के तुम हो नाथा।
जहँ जहँ भेजो तहँ चल जावै, जो गावावहिं सोई गावै।
जो करवावहिं सोई करहैं, कह टेऊँ निज बल नहिं धरहैं ॥ ४ ॥

तुम्हरे बल सब तरुवर फूले, तुम्हरे बल सर सागर झूले।
तुम्हरे बल नभ रवि शशि चमके, तुम्हरे बल घन दामिनि दमके।
तुम्हरे बल अहि ले भू भारा, तुम्हरे बल अगि जग संचारा।
जड़ माया कर सके न काजे, तुम्हरे बल जग बहु विधि साजे।
हे प्रभु तुम हो शक्ति निधाना, कह टेऊँ मैं ऐसे जाना ॥ ५ ॥

मानुष को नहीं रंचक ताकत, अपने को कछु ना रख साकत।
ताँके बैरी बहु जग फिरते, तेरे बल वह निर्भय चरते।
तेरे बल अन्ध देखे नैना, तेरे बल गुंग बोले बैना।
तेरे बल पंगु गिरि पर धावे, तेरे बल जड़ बोध बतावे।
हे प्रभु सब बल तुम्हरे माहीं, कह टेऊँ कछु संशय नाहीं ॥ ६ ॥

काष्ठ विरोधी अगि बन रहती, तुम्हरे बल बन हानि न होती।
धरनी को जल गालन हारा, तेरे बल दे भूमि सहारा।
जल है आगि विरोध प्रधाना, तुम्हरे बल अगि सिन्धु समाना।
पंचभूत परस्पर विरोधी, तुम्हरे बल इन सृष्टी सोधी।
तीन गुणों का है नहिं मेला, टेऊँ तव बल खेलत खेला ॥ ७ ॥

तेरे बल को जो नहिं जानत, वेद पुरान तिहँ मूर्ख मानत।
जहँ जावे तहँ दुख सो पावे, घोर नर्क में गोता खावे।
तेरे बल को मानत जोई, भक्त तुम्हारा उत्तम सोई।
तेरे मन सो लागत प्यारा, छिन छिन देते तिहँ दीदारा।
ताँके सबहीं दूख निवारे, कह टेऊँ तुम काज संवारे ॥ ८॥

आदि पुरुष तुम गहर गम्भीरा, पूरन इक रस सज्जन सुधीरा।
माया ते भिन्न ईश अकाला, भक्तनि वत्सल दीन दयाला।
राजन के तुम हो महाराजा, पूरन करते सबके काजा।
योग क्षेम के करने हारा, प्रेम मूरती शान्ति भण्डारा।
अति उपकारी जीवन दाता, कह टेऊँ तुम जग पित माता ॥ ९॥

सर्वकाल में आप स्वतन्तर, बान्ध सके ना कोई यन्तर।
प्रेम बन्ध इक तुम को बान्धे, हरिजन याँते प्रेमहिं साधे।
तुम को खोजत है सब सृष्टी, काहू के नहिं आवत दृष्टी।
जाँको चाहत आप जनाना, ताहिं मिले गुरुदेव सुजाना।
गुरु कृपा ते होकर प्रसन्न, कह टेऊँ तुम देते दर्शन ॥ १०॥

॥ दोहा ॥

हे हरि तूं बेअन्त है, तेरे नाम अनन्त।
कह टेऊँ को ना लखे, काम तेरे बेअन्त ॥ ३॥

दशपदी (३)

परम पुरुष तुम प्रभु परमेश्वर, नाथ निरंजन निर्भय नटवर।
सर्व आतमा आनंद धामा, महा महेश्वर पूरण कामा।
जगत पती जगदीश्वर स्वामी, विश्व नियन्ता अन्तर्यामी।
जीव चराचर के तुम पालक, परम दयामय सब संचालक।
महा शक्ति माया का नायक, कह टेऊँ हो संत सहायक ॥ १ ॥

महा सिन्धु है रूप तुम्हारा, जग तरंग बहु तोहि मंझारा।
एक निमष में जगत अनन्ता, तुम से उपजत है भगवन्ता।
अपर निमष में लय हो सारा, पावत कोई अन्त न थारा।
उपजत बिनसत जगत अपारा, देख हसत तुम होय न्यारा।
अपनी महिमा आपे जानत, कह टेऊँ नहिं और पछानत ॥ २ ॥

हे प्रभु तेरे जग बेअन्ता, तिन देवों के नाम अनन्ता।
जगत जगत के भिन्न संचालक, उपजे जगत साथ जग पालक।
भिन्न भिन्न जग के काम चलावहिं, सब जीवों को सुख पहुँचावहिं।
खेल तुम्हारा अद्‌भुत आदी, पारब्रह्म तुम आप अनादी।
अपनी महिमा माहिं समाया, कह टेऊँ किस भेद न पाया ॥ ३ ॥

कौन काल में जगत उपाया, बैठ देश किहँ ठाठ बनाया।
कौन घड़ी तुम किया विचारा, कैसे रचिया है संसारा।
कैसे सर्व जीव निपजाये, कैसे रूप रंग उपजाये।
कैसे जग का काम चलावहिं, ताँका अन्त न कोई पावहिं।
सोचत सोचत सब विस्माते, कह टेऊँ बेअन्त बताते ॥ ४ ॥

ब्रह्मा विष्णू शंकर देवा, तेरा तनिक लखहिं ना भेवा।
वरुण अग्नि पुनि रवि शशि तारे, तिल भरि अन्त लखहिं ना थारे।
नारद शारद शेष गणेशा, पार न पावहिं तुम्हरा लेशा।
इन्द्र कुबेर वृहस्पति आदी, अन्त न तेरा लखे अनादी।
सुरगण सुर अंगना गुन गावहिं, टेऊँ वे भी अन्त न पावहिं ॥ ५ ॥

कोटिक जापी जप को जापै, कोटिक तपस्वी तप को तापै।
कोटिक ध्यानी ध्यान लगावैं, कोटिक योगी योग पचावैं।
कोटिक कर्मी कर्म कमावैं, कोटिक लगनी लगन मिलावैं।
कोटिक पण्डित पढ़त पुराना, कोटिक ज्ञानी कहते ज्ञाना।
कोटिक मुनि रह मौन मंझारे, कह टेऊँ तव पाय न पारे ॥ ६ ॥

सुरजन मुनिजन हरिजन गुनिजन, गावहिं तेरी महिमा निशदिन।
खेचर भूचर जलचर निशिचर, गावहिं महिमा तव परमेश्वर।
अण्डज आदी चारों खानी, गावहिं यश तव निज निज बानी।
लोकपाल पुनि लोक निवासी, गावहिं यश तेरा गुण रासी।
ऋषी मुनी सनकादिक सन्ता, कह टेऊँ सब कह बेअन्ता ॥ ७ ॥

एक जगत में जगत अपारा, जग जग में है बहु संसारा।
कोटि जगत के मिल कर जनता, कोटिक कोटि कल्प पर्यन्ता।
प्रभू तेरे गुण को गावहिं, तो भी तिल भर पार न पावहिं।
नेति नेति सब वेद बतावैं, कह कह यश तुझ माहिं समावैं।
अद्भुत खेल लखे हरि तेरा, टेऊँ भया विस्मय मन मेरा ॥ ८ ॥

तुमहिं लखे जो तुम सम सोई, वेद कहत संशय नहिं कोई।
भक्त आप में भेद न राई, भेद लखे ताँके मुख छाई।
जन से ओत पोत तुम कैसे, जल हिम हिम जल विलग न जैसे।
तुझ में जन तुम जनके माहीं, एक ज्योति हो कछु भिन्न नाहीं।
भक्तों से कछु नाहिं छिपाते, टेऊँ तुम तिन पर बलि जाते ॥ ९ ॥

कर कृपा मुझ भक्त बनाओ, हरि निज चरनों माहिं लगाओ।
तेरी कृपा बिन भगवन्ता, जग में कोई भक्त न बनता।
जिस पर करते दया मुरारी, ताँको देते भक्ती प्यारी।
हे प्रभु मेरी सुन अरदासा, अविचल भक्ती दे सुखरासा।
तव दर्शन की है मुझ प्यासा, कह टेऊँ कर पूरन आसा ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

महा अचरजमय आप हरि, अचरज तेरा नाम।
टेऊँ अचरज खेल तव, अचरज तेरे काम ॥ ४ ॥

दशपदी (४)

महा अचरजमय तुम हरि राया, महा अचरजमय तुम्हरी दाया।
महा अचरजमय तेरा दर्शन, महा अचरजमय तेरा प्रसन्न।
महा अचरजमय तेरी शक्ती, महा अचरजमय तेरी भक्ती।
महा अचरजमय तेरी महिमा, महा अचरजमय तेरी अणुमा।
महा अचरजमय तेरी करणी, कह टेऊँ कछु जाय न वरणी ॥ १ ॥

महा अचरजमय तेरी माया, रूप जिसी का कहा न जाया।
महा अचरजमय तेरी छाया, जिसने रचिया भुवन निकाया।
महा अचरजमय संकल्प तेरा, अन होता जग रचा घनेरा।
महा अचरजमय रचना थारी, देखी जाय न जाय उचारी।
महा अचरजमय तेरे कर्मा, कह टेऊँ को जाने मर्मा॥ २॥

महा अचरजमय रूप तुम्हारा, है इकरस पुनि सब ते न्यारा।
सर्व चिन्त ते रहत अचिन्ता, सर्व अन्त ते रहत अनन्ता।
सर्व भेद ते रहत अभेदा, सर्व छेद ते रहत अछेदा।
सर्व कर्म ते रहत अकर्मा, सर्व धर्म ते रहत अधर्मा।
सर्व रूप ते रहत अरूपा, टेऊँ लखे को मुनिवर भूपा ॥ ३॥

वाह वा तेरा तेज निराला, कोटि भुवन को करत उजाला।
सकल जीव तव रूप विमोहे, सर्व वस्तु में आप समोहे।
कोटी रवि शशि दामिनि ज्योती, कोटिक पावक माणिक मोती।
तव छबि आगे लागत फीके, ज्यों रवि ढिग लग दीप न नीके।
सबसे शोभा ऊँच तुम्हारी, कह टेऊँ जिहँ विश्व उजारी ॥ ४॥

अलख निरंजन रूप अरूपा, परम मनोहर अचल स्वरूपा।
अगम अगोचर सब घट अन्तर, अनन्त कौतुक करत निरन्तर।
तुम बिन माया निबल कहावे, तव बल पा बहु नाच नचावे।
अखिल भुवन का ठाठ बनावे, लय कर सब फिर तोहि समावे।
महिमा तेरी अद्‌भुत भारी, टेऊँ वेदन अकथ उचारी ॥ ५॥

पारब्रह्म का अद्भुत खेला, सबसे मिल पुनि रहत अकेला।
भेद बिना बहु भेद लखावे, इन्द्रियों बिन बहु कर्म कमावे।
रूप बिना बहु रूप दिखावे, रंग बिना बहु रंग रचावे।
जाति बिना बहु जाति कहावे, जन्म बिना बहु जन्म जनावे।
नहिं कछु तामें सब कछु मानत, कह टेऊँ तिहँ को जन जानत ॥ ६ ॥

महा अचरजमय माया चेतन, माया पलटत इकरस चिद्घन।
पांच भूत अचरजमय सारा, अचरजमय जिन जग विस्तारा।
अचरजमय है सकल पदारथ, अचरजमय है सब पुरुषारथ।
अचरज की हैं अकथ कहानी, आगम निगम कहत अस बानी।
इस अचरज को जाने सोई, टेऊँ हरी भक्त है जोई ॥ ७ ॥

अचरज आगम निगम पुराना, अचरज ज्ञान ध्यान विज्ञाना।
अचरज चतुर अवस्था बानी, अचरज चार वर्ण चौखानी।
अचरज रंग रूप कुल जाती, अचरज घड़ी याम दिन राती।
अचरज स्वर्ग मृत पाताला, अचरज सागर ताल विशाला।
अचरज मन बुद्धि चित अहँकारा, कह टेऊँ अचरज तन सारा ॥ ८ ॥

अचरज उत्पति प्रलय धारे, अचरज रवि शशि दामिनि तारे।
अचरज सात दीप नव खण्डा, अचरज दशो दिशा ब्रह्मण्डा।
अचरज पर्वत बनखण्ड सारा, अचरज बादल बरसत वारा।
सब अचरज ते अचरज एका, संत करत मिल तांहि विवेका।
गुरु मति ले लख अचरज साचा, कह टेऊँ तज अचरज काचा ॥ ९ ॥

इक अचरज कल्पित मय जानो, दूजा अचरज सत्य पछानो।
कल्पित माया जगत पसारा, सत् चेतन है ताहिं अधारा।
कल्पित अधिष्ठान का रूपा, ऐसे कहते संत अनूपा।
यामें तिल जो भेद पछाने, महा मूण्ढ तिहँ वेद बखाने।
जड़ चेतन इक कर जिहँ जाना, कह टेऊँ सो सन्त सुजाना ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

पूरन सत्गुरु देव को, करहूं मैं प्रणाम।
टेऊँ जिहँ प्रसाद ते, पाया आतमराम ॥ ५ ॥

दशपदी (५)

सत्गुरु की महिमा बेअन्ता, सत्गुरु प्रकट है भगवन्ता।
अपने भेद जनावन कारन, पांच भूत तन कीना धारन।
कर कृपा जिहँ भेद बतावे, गुरु महिमा को सोई पावे।
गुरु हरि में है भेद न कोई, गुरु हरि हरि गुरु इक है दोई।
सब घट जिसको सत्गुरु सूझे, कह टेऊँ सो और न बूझे ॥ १ ॥

सरगुण निर्गुण उभय स्वरूपा, दोनों गुरु के रूप अनूपा।
सगुण रूप से राह बतावै, अपना निर्गुण रूप लखावै।
कोटि जीव यों करत निहाला, दे निर्मल निज ज्ञान विशाला।
गुर सम ना को जग उपकारी, बार बार गुरु पै बलिहारी।
टेऊँ दोनों वपु सुखदाई, सरगुण से निर्गुण गति पाई ॥ २ ॥

निर्गुण गुरु का गुप्त स्वरूपा, जानत कोई तिहँ मति भूपा।
प्रकट सुन्दर सगुन स्वरूपा, देखत हैं सब जग ये रूपा।
दर्शन परसन वचन सुनाके, जीवन तारत भरम नसाके।
हो न सगुन बिन निर्मल ज्ञाना, ऐसे वेद करत वख्याना।
निर्गुन ते सरगुन अधिकाई, कह टेऊँ संशय नहिं राई ॥ ३ ॥

निर्गुण गुरु का रूप निराला, सकल रूप ते अजब उज्याला।
चेतन इकरस जाननहारा, आतम अमर अखण्ड अपारा।
सर्व व्यापक जग आधारा, सर्व प्रेरक सिरजण हारा।
सूक्ष्म अन्तर अलख अनामी, अगम अगोचर अमल अकामी।
कह टेऊँ गुण तीन अतीता, सो जाने जिहँ गुरु प्रतीता ॥ ४ ॥

भोगों की नहिं जिनको आसा, हरि दर्शन की है इक प्यासा।
सब जग तज जे हरि मग चाहत, गुरु बिन हरि की राह न पावत।
तिन दासों के हित हरि दाता, सत्गुरु का वपु धर जग आता।
दे दर्शन तिन बोध बतावत, अपना निर्गुन रूप लखावत।
इस विधि जन की कर कुशलाता, कह टेऊँ निज रूप समाता ॥ ५ ॥

सगुण गुरू की सेव कमावे, पापों की सो मैल मिटावे।
सगुण रूप गुरुदेव ध्यावे, चंचलता ताँकी मिट जावे।
सगुण गुरू का जो उपदेशा, आवरण मेटे एक निमेषा।
जगत भरम सब लय हो जावे, ब्रह्म रूप में जाय समावे।
सगुण रूप गुरु की ले शरनी, कह टेऊँ कर निर्मल करनी ॥ ६ ॥

गुरु दर्शन दे चित्त को चैना, बड़ भागी जो देखत नैना।
गुरु की बाणी बहुत रसाली, श्रवण करता भाग्यशाली।
गुरु की जिस पर पूरण दाया, ताँके मन में शंक न माया।
गुरु का बल है अतिशय भारी, जिहँ जन की जम भीत निवारी।
कह टेऊँ गुरु का बड़ नामा, जिहँ जपते हो पूरन कामा ॥ ७ ॥

गुरु मूरत है हरि की मूरत, गुरु सूरत है हरि की सूरत।
गुरु अर्चन है हरि का अर्चन, गुरु सुमरन है हरि का सुमरन।
गुरु संगति है हरि की संगति, गुरु रंगति है हरि की रंगति।
गुरु शरनी है हरि की शरनी, गुरु करनी है हरि की करनी।
कह टेऊँ गुरु हरि इक जानो, भेद न तांमें रंचक आनो ॥ ८ ॥

गुरु की काया है हरि काया, गुरु की छाया है हरि छाया।
गुरु की दाया है हरि दाया, गुरु की माया है हरि माया।
गुरु की सेवा सा हरि सेवा, गुरु का भेवा सो हरि भेवा।
गुरु का जो मन सो मन हरि का, गुरु का जो जन सो जन हरि का।
पारब्रह्म का द्वितीय स्वरूपा, कह टेऊँ प्रत्यक्ष गुरु रूपा ॥ ९ ॥

विनती मेरी सुनो दयाला, तुम हो सत्गुरु अति कृपाला।
अपना निर्गुन रूप लखाओ, घट घट अपना दरस दिखाओ।
सगुन रूप तव वचन मंझारा, प्रेम निश्चय हो अटल हमारा।
अपने संग सत्गुरु रख लीजे, सेवा में मुझको रुचि दीजे।
निशदिन सत्गुरु तव गुण गाऊँ, कह टेऊँ जीवन फल पाऊँ ॥ १० ॥

।। दोहा ।।

पारस ज्यों पूरा गुरू, लोहे के सम दास।
कह टेऊँ गुरु संग से, हो जन कंचन रास।। ६ ।।

दशपदी (६)

ब्रह्मश्रोत्री नेष्ठी होवे, सकले भेद भ्रान्ती खोवे।
ब्रह्मातम निज रूप पछाने, देह भाव हिरदे ना आने।
काम क्रोध मद मत्सर रीता, द्वन्द्व रोग ते होय अतीता।
लोभ मोह जिहँ मान न ममता, जड़ चेतन में धारे समता।
जग की आस न राखत जोई, कह टेऊँ है सत्गुरु सोई ।। १ ।।

जो स्वइच्छा से जन आवे, तांको आदी शब्द सुनावे।
मन में इच्छा ना कछु राखे, अपने को गुरु कबहूँ न भाखे।
शिष्य को हित का दे उपदेशा, जो न मने वह हो न क्लेशा।
निश दिन राम नाम रट लावे, आप तरे पुनि और तरावे।
ऐसे सत्गुरु से हित होवे, कह टेऊँ सब संशय खोवे ।। २ ।।

पूरे गुरु की पूरी बहनी, पूरे गुरु की पूरी कहनी।
पूरे गुरु की पूरी सहनी, पूरे गुरु की पूरी रहनी।
पूरे गुरु का पूरा सुमरन, पूरे गुरु का पूरा अर्चन।
पूरे गुरु की पूरी द्दष्टी, पूरे गुरु की पूरी सृष्टी।
पूरे गुरु की बातें पूरी, कह टेऊँ तिस चाहूँ धूरी ।। ३ ।।

पूरे गुरु का दर्शन पूरा, जिहँ देखे अघ होवै दूरा।
पूरे गुरु का संग है पूरन, जिहँ संग से हो संसा चूरन।
पूरे गुरु की पूरी कृपा, जासें मिटे मोह मद दर्पा।
पूरे गुरु की पूरी शिक्षा, जिहँ सुनते हो आतम लक्षा।
पूरे गुरु की पूरी शरनी, कह टेऊँ है तापनि हरनी।। ४।।

पूरे गुरु बिन मति ना पूरी, पूरे गुरु बिन गति ना पूरी।
पूरे गुरु बिन होय न ज्ञाना, पूरे गुरु बिन होय न ध्याना।
पूरे गुरु बिन होय न मुक्ती, पूरे गुरु बिन होय न युक्ती।
पूरे गुरु बिन ना बन्ध छूटे, पूरे गुरु बिन भ्रम न टूटे।
गुरु बिन काज सरे ना कोई, कह टेऊँ यह वेदनि गोई ।। ५।।

कोटि देव को मन से पूजे, धर्म हेत जा रण में जूझे।
भेष धरे तन भस्म रमावे, जाप जपे शिर तिलक लगावे।
वेद पढ़े षट् शास्त्र बाचे, बहु विधि कर्मों में नित राचे।
सकल जगत से होय उदासा, जंगल में जा करे निवासा।
गुरु बिन कबहूँ जीउ न जागे, कह टेऊँ ना अविद्या भागे ।। ६।।

तपी होय बहु तप को तापे, जपी होय बहु मन्तर जापे।
नेम व्रत बहु कर्म कमावे, बैठ गुफा में ध्यान जमावे।
सब तीर्थों का मंजन करहैं, देवों का नित ध्यान सु धरहैं।
पाठ करे पढ़ ग्रन्थ पुराना, तर्क वितर्क करे विधि नाना।
कोटि उपाय करे जो कोई, टेऊँ गुरु बिन मुक्त न होई ।। ७।।

पांच अग्नि में आप जलावे, जाय हिमाचल देह गलावे।
लाख वर्ष लौं उलटा लटके, बार बार तन भूमी पटके।
पवन अहार करे अन्न त्यागे, मरघट में निशबासर जागे।
शिर ऊँचा करि रवि को देखे, व्रत धरे जग माहिं विशेखे।
तो भी गुरु बिन नहिं बन्ध टूटे, कह टेऊँ जम से नहिं छूटे ॥ ८ ॥

अर्ध गगन में आसन मारे, योग कला को हृदय धारे।
कहाँ गुप्त कहँ प्रगट होवे, सकल पदार्थ प्रत्यक्ष जोवे।
ऋद्धि सिद्धि नव निधि आकर सेवे, मन वाँछित फल सबको देवे।
भूत भविष्यत की गम धारे, इत्यादिक कर संयम सारे।
तो भी गुरु बिन होय न ज्ञाना, कह टेऊँ नहिं मिटे अज्ञाना ॥ ९ ॥

मिथ्या जड़ दुखमय संसारा, सत् चित आनन्द ब्रह्म अपारा।
यों लख जग की आस निवारे, ब्रह्म दरस की लोचा धारे।
पूरन गुरु की शरनी जाओ, तन मन धन की भेट चढ़ाओ।
श्रद्धा से गुरु शिक्षा सुनकर, निज घर पाओ बन्धन परिहर।
ऐसे अपना दूख नसाओ, कह टेऊँ सुख माहिं समाओ ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

निर्गुण चेतन ब्रह्म है, सगुण रूप गुरु जान।
कह टेऊँ गुरुदेव के, धर चरनों का ध्यान ॥ ७ ॥

दशपदी (७)

सत्गुरु के पद परम पुनीता, सत्गुरु के पद मन के मीता।
सत्गुरु के पद तीर्थ पावन, सत्गुरु के पद देवहिं भावन।
सत्गुरु के पद वन्दन योगा, सत्गुरु के पद तारत लोगा।
सत्गुरु के पद जन का जीवन, सत्गुरु के पद है सुख सीवन।
सत्गुरु के पद जोई ध्यावे, कह टेऊँ मन वाँछित पावे ॥ १ ॥

गुरु का दर्शन मंगलकारी, जनम मरन के संकट हारी।
गुरु का दर्शन सब फल दाता, जनम जनम का पाप मिटाता।
गुरु का दर्शन करत निहाला, देखन से हो भाग विशाला।
गुरु का दर्शन है अति शीतल, देखत मन की जावे जल जल।
गुरु का दर्शन जो जन देखे, कह टेऊँ जम द्वार न पेखे ॥ २ ॥

वचन गुरू का सब दुख भंजन, वचन गुरू का जन मन रंजन।
वचन गुरू का मन ठहरावे, वचन गुरू का पन्थ दिखावे।
वचन गुरू का बन्धन तोड़े, वचन गुरू का हरि से जोड़े।
वचन गुरू का साचा संगी, वचन गुरू का मेटत तंगी।
वचन गुरू का सबसे मीठा, कह टेऊँ तोड़त जम चीठा ॥ ३ ॥

वचन गुरू का विपति हटावे, उभय लोक में लाज बचावे।
वचन गुरू का धीरज दाता, बालक को जैसे पित माता।
वचन गुरू का दे विश्रामा, करहैं जन के पूरन कामा।
वचन गुरू का कटहिं चुरासी, नारद अपने मुख प्रकासी।
वचन गुरू का जो जन धारे, कह टेऊँ सो सब कुल तारे ॥ ४ ॥

गुरु मार्ग है निर्मल नीका, मुक्ती दायक जीवन जी का।
गुरु मार्ग में डर नहिं कोई, निर्भय करता जन को सोई।
गुरु मार्ग में चाह न रहती, ऋद्धि सिद्धि नौ निद्धि सेवा चहती।
गुरु मार्ग में काल न आवे, माया आ पद शीश निवावे।
गुरु मार्ग में जो जन चाले, कह टेऊँ पा धाम विशाले ॥ ५ ॥

सत्गुरु सम ना पर उपकारी, मात पिता हरि ते हितकारी।
अमृत ते गुरु दर्शन मीठा, मैंने भी अनुभव कर डीठा।
गुरु मन्त्र में शक्ति अपारी, जांसे वश होवत बनवारी।
सर्व सूख गुरु चरनों माहीं, और कहीं भी मिलता नाहीं।
गुरु की संगति शुभ गुणदाई, कह टेऊँ गुरु पै बलि जाई ॥ ६ ॥

सत्गुरु शिष्य को बहु विधि पाले, बालक को ज्यों मात संभाले।
धरनी पति ज्यों पालत प्रजहिं, वृक्षों को ज्यों माली सृजहिं।
कूंज सुतनि को ज्यों मन सारे, कछुवा ध्यान अण्डे का धारे।
पालत खग सुत अंक पसारे, शूम दाम का ज्यों रखवारे।
मालिक राखे घर को जैसे, कह टेऊँ गुरु राखे तैसे ॥ ७ ॥

तिस गुरु को मैं करूं जुहारा, जिसने भव जल पार उकारा।
तिस गुरु को मेरा आदेशा, जिसने दीना सत् उपदेशा।
तिस गुरु को सद्वार नमामी, जिसने कीना मुझ निष्कामी।
तिस गुरु को है वन्दन मेरी, जिसने काटी अविद्या बेरी।
तिस गुरु पर मैं वारौं जीया, कह टेऊँ जिस निर्भय कीया ॥ ८ ॥

तिस गुरु को मेरा प्रणामा, जिन्हें लखाया आतमरामा।
तिहँ गुरु पै मैं बलि बलिहारी, अहं बुद्धी जिहँ मन की टारी।
तिहँ गुरु के दर का मैं गोला, जिसने दीना नाम अमोला।
तिहँ गुरु का मैं दासन दासा, जिहँ अमरापुर दीना वासा।
तिहँ गुरु पै मैं नित कुर्बानी, कह टेऊँ दी जिस गुणखानी ॥ ९ ॥

तिहँ गुरु के मैं चरननि चेरा, जिसने मेटा भ्रम अन्धेरा।
तिहँ गुरु के मैं करहूं सेवा, जिसने दीना हरि का भेवा।
तिहँ गुरु के पद नाऊँ माथा, जिनहिं सुनाई हरि की गाथा।
तिस गुरु का दर्शन मुझ भाया, मोह नीन्द से जिनहिं जगाया।
सत्गुरु के मैं गुण नित गाऊँ, कह टेऊँ परमानन्द पाऊँ ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

सब जग देखा खोज कर, ऊँचा है गुरुदेव।
कह टेऊँ ताँते करो, सत्गुरु की नित सेव ॥ ८ ॥

दशपदी (८)

चतुर भान्ति गुरु सेवा कीजे, तन मन धन बाणी अर्पीजे।
तन धन से कर गुरु की सेवा, मन में धर मूरत गुरु देवा।
बानी से गुरु के गुण गाओ, अहंता ममता ना मन लाओ।
गुरु सेवा में तर्क न आनो, गुरु आज्ञा को सत् कर मानो।
ऐसे नितहीं सेवा करिये, कह टेऊँ भव सागर तरिये ॥ १ ॥

गुरु की सेवा परम उदारी, गुरु की सेवा हरि को प्यारी।
गुरु की सेवा परम खज़ाना, गुरु की सेवा सब सुख थाना।
गुरु की सेवा निर्मल कर्मा, गुरु की सेवा निर्मल धर्मा।
गुरु की सेवा रतन अमोला, गुरु की सेवा द्रव्य अतोला।
गुरु सेवा सम नहिं को साधन, कह टेऊँ जो कर हैं सो धन ॥ २ ॥

गुरु सेवा गुरु पदवी देवे, गुरु सेवा सब अघ हर लेवे।
गुरु सेवा सब साधन मूला, गुरु सेवा ते हरि अनुकूला।
गुरु सेवा से हो शुद्ध हिरदा, गुरु सेवा ते बाढ़े श्रद्धा।
गुरु सेवा मेटे अभिमाना, गुरु सेवा ते उपजे ज्ञाना।
गुरु सेवा सुर नर को भावत, कह टेऊँ बड़भागी पावत ॥ ३ ॥

गुरु सेवा से गुरु हो प्रसन्न, गुरु सेवा से दे हरि दर्शन ।
गुरु सेवा से काल न खावे, गुरु सेवा से वैकुण्ठ जावे।
गुरु सेवा से पूरन आसा, गुरु सेवा से कारज रासा।
गुरु सेवा है तीरथ मंजन, गुरु सेवा से दोष निखंजन।
गुरु सेवा नित करहैं जोई, कह टेऊँ बड़भागी सोई ॥ ४ ॥

गुरु की सेवा प्रबल मन्तर, वश में होवे गुरू निरन्तर।
गुरु की सेवा पौड़ी सुन्दर, जाँ पर चढ़ दीसे हरि मन्दिर।
गुरु की सेवा सुरतरु छाया, पूरन करहै काज निकाया।
गुरु की सेवा निर्मल मारग, ताँ चल परसे पानी सारंग।
गुरु सेवा सम और न पूजा, टेऊँ इस सम कर्म न दूजा ॥ ५ ॥

सेव भाव को मन में आने, तन धन कुल के मद को हाने।
अहँ बुद्धि फल आस नसावे, मन में कबहूँ तर्क न लावे।
सेवक गुरु में भेद न जाने, लोक कुटुम्ब की लाज न माने।
सेवा में नहिं अन्तर डाले, हर्ष सहित गुरु आज्ञा पाले।
इस विधि जो गुरु सेवा करता, कह टेऊँ सो बन्धन हरता ॥ ६ ॥

गुरु सेवक का होवत माना, सुर नर मुनिजन दे सन्माना।
गुरु सेवक को जम ना जीते, गुरु प्रतापे रहत अभीते।
गुरु सेवक को दुर्लभ नाहीं, मुक्ती भुक्ती सुलभ सु ताहीं।
गुरु सेवक को छुहत न पापा, तीन काल ताँ नहिं संतापा।
गुरु सेवक हरि दर प्रवाना, टेऊँ तिस पर वारौं प्राना ॥ ७ ॥

गुरु सेवक निज घर में बैठे, देह गेह में मूल न पैठे।
गुरु सेवक ऊँचा पद पावे, जनम मरन में कबहुँ न आवे।
गुरु सेवक की माया चेरी, ताँको आस न काहूँ केरी।
गुरु सेवक को सब जग माने, स्वारथ बिन सो सब सन्माने।
गुरु सेवक की सबको प्यासा, कह टेऊँ मैं ताँका दासा ॥ ८ ॥

गुरु सेवक का निर्मल दर्शन, गुरु सेवक का निर्मल परसन।
गुरु सेवक के निर्मल वचना, गुरु सेवक की निर्मल रचना।
गुरु सेवक की निर्मल करणी, गुरु सेवक की निर्मल शरणी।
गुरु सेवक की निर्मल नृत्ती, गुरु सेवक की निर्मल वृत्ती।
गुरु सेवक का सब कछु निर्मल, कह टेऊँ कर निश्चय अविचल ॥ ९ ॥

गुरु सेवक जग ताहिं उद्धारे, श्रद्धा से जो पाद पखारे।
गुरु सेवक तिहँ कलिमल हरहीं, श्रद्धा से जो दर्शन करहीं।
गुरु सेवक तिहँ देवे मुक्ती, श्रद्धा से जो लेवे जुगती।
गुरु सेवक तिहँ हरत क्लेशा, श्रद्धा से जो सुन उपदेशा।
गुरु सेवक की महिमा भारी, कह टेऊँ ताँ पर बलिहारी ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

गुरु की निन्दा जो करे, सो नर नरके जाय।
गुरु निन्दक दुइ लोक में, टेऊँ सुख ना पाय॥ ९ ॥

दशपदी (९)

अवगुन में यह अवगुन मन्दा, बिन कारन करनी पर निन्दा।
ताँते गुरु निन्दा मन्द मानो, दुर्गन्ध से भी दुर्गन्ध जानो।
निन्दक के मन में ही भावे, काक कीट ज्यों दुर्गन्ध खावे।
कालकूट से भी अधिकाई, गुरु निन्दा को जानो भाई।
गुरु निन्दा सम पाप न कोई, कह टेऊँ यह ग्रन्थनि गोई ॥ १ ॥

सत्गुरु की जो निन्दा करता, कीट पतंग अहि जोनी धरता।
सत्गुरु का जो कर अपमाना, सो नर होवे सूकर स्वाना।
सत्गुरु से जो मुख को फेरे, सो नर पावत दूख घनेरे।
सत्गुरु से जो मन उलटावे, बार बार सो जमपुर जावे।
तर्क दृष्टि कर जो गुरु त्यागे, टेऊँ कोटि विघ्न तिहँ लागे ॥ २ ॥

षट् शास्त्र दश अष्ट पुराना, चार वेद पढ़ करहिं वख्याना।
मन्तर तन्तर यन्तर साधे, सब देवों को नित आराधे।
कर्म काण्ड करहैं बहुतेरे, तीर्थ नावे जाय घनेरे।
भावें ऋद्धि सिद्धि बहुत चलावे, जग में बहुते यश को पावे।
परन्तु गुरु निन्दक जो होई, कह टेऊँ गति पाय न सोई ॥ ३ ॥

गुरु का निन्दक है अति पापी, शान्ति न पावत हो संतापी।
गुरु का निन्दक नीच ते नीचा, पुनि पुनि होवे ताँकी मीचा।
गुरु का निन्दक मति का खोटा, बार बार खावे जम चोटा।
गुरु का निन्दक मन का मैला, जहँ जावे तहँ खावे ठेला।
गुरु का निन्दक कपटी झूठा, कह टेऊँ ताँसे हरि रूठा ॥ ४ ॥

गुरु का निन्दक नरकें पड़हीं, गीले काष्ठ ज्यों तहँ जरहीं।
गुरु का निन्दक नीचे गिरता, टूटा फल ज्यों भू में पड़ता।
गुरु का निन्दक अहनिश धावे, चलदल दल ज्यों शान्ति न पावे।
गुरु का निन्दक तेज विहीना, ग्रहण समय ज्यों रवि छवि हीना।
गुरु निन्दक सह मूल विनासे, टेऊँ ज्यों तरु जड़ सह नासे ॥ ५ ॥

गुरु निन्दक को कोय न राखे, सुर नर मुनि हरि सब तिहँ नाखे।
गुरु निन्दक नित जहँ तहँ भटके, अर्ध उर्ध माहीं सो लटके।
गुरु निन्दक गृह पित्र न जेवहिं, देव हरी तिहँ भोग न लेवहिं।
गुरु निन्दक को जमगण कूटे, कितना कूके तौ ना छूटे।
गुरु निन्दक का मिटहिं न दोषा, कह टेऊँ तिहँ होय न मोषा ॥ ६ ॥

गुरु निन्दक से प्रीति न करिये, स्वप्ने में भी तासें डरिये।
गुरु निन्दक के संग न डोलो, होय मेल तांसे नहिं बोलो।
गुरु निन्दक का मुख ना देखो, दृष्टि पड़े लख पाप विशेखो।
गुरु निन्दक के बैठ न साथा, जो बैठो तो सुनहुँ न गाथा।
गुरु निन्दक का नाम न लीजे, कह टेऊँ तिहँ नाहिं पतीजे ॥ ७ ॥

निन्दक का भी हो निस्तारा, निन्दा तज ले गुरु आधारा।
गुरु चरनों में श्रद्धा धारे, सेव करे निज मान निवारे।
सत्गुरु दाता दीन दयाला, अवगुन बख्शे करत निहाला।
करुणा कर तिहँ संग में राखे, शरणागत को नहिं गुरु नाखे।
सत्गुरु सम को जग में नाहीं, कह टेऊँ मैं बलि बलि ताहीं ॥ ८ ॥

सत्गुर जैसा और न दाता, दीन बन्धु है दीन त्राता।
ऋद्धि सिद्धि नव निधि गुरु की चेरी, कमती नहिं किस वस्तू केरी।
सत्गुरु है सुखदायक स्वामी, सब विधि समर्थ अन्तर्यामी।
अपने जन की रक्षा करता, काम क्रोध मद शत्रु हरता।
दुख मेटे देवे सुख वासा, कह टेऊँ कर पूरी आसा ॥ ९ ॥

सत्गुरु में जो धर विश्वासा, कारज तांके होवे रासा।
बिन विश्वास सरे नहिं काजा, बिन जल ज्यों न चले जहाजा।
श्रद्धा से सब साधन फूले, जल सिंचे ज्यों तरुवर झूले।
श्रद्धा बिन फल दे नहिं कोई, भावें देव गुरू हरि होई।
तांते धर विश्वास प्यारा, कह टेऊँ गुरु तारन हारा ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

तारत है भव सिन्धु से, सन्तजनों का संग।
टेऊँ सन्तनि संग बिन, लगे न आतम रंग ॥ १० ॥

दशपदी (१०)

सन्तनि संग से उपजे प्रेमा, सन्तनि संग में निपजे नेमा।
सन्तनि संग से सोता जागे, सन्तनि संग नर विषय त्यागे।
सन्तनि संग हो ज्ञान यथार्थ, सन्तनि संग हो सिद्ध परमार्थ।
सन्तनि संग हरि होय दयाला, सन्तनि संग से मिटे जंजाला।
संतनि संग लागत हरि ध्याना, कह टेऊँ होवे कल्याना ॥ १ ॥

सन्तनि संग से सुमति प्रकाशे, सन्तनि संग से कुमति विनाशे।
सन्तनि संग नर हरि रस पागे, सन्तनि संग से हरि मग लागे।
सन्तनि संग हो तन मन सूचा, सन्तनि संग मिलहैं पद ऊँचा।
सन्तनि संग जग बन्धन टूटे, संतनि संग से संशय छूटे।
संतनि संग दे चार पदारथ, कह टेऊँ कर जन्म सकारथ ॥ २ ॥

साधु संग उपजे वीचारा, हरि सुमरन सत् जगत असारा।
साधु संग होवे वैरागा, उभय लोक भोगनि रस त्यागा।
साधु संग उपजे निज ज्ञाना, जगत सहित हो नाश अज्ञाना।
साधु संग मन हो संतोषा, मिट जावे सब तृष्णा दोषा।
साधु संग करता है निर्मल, कह टेऊँ मन होवे निश्चल ॥ ३ ॥

साधु संग सम सुरतरु धेनू, मन वाँछित फल सदहीं देनू।
साधु संग सम पारस चन्दन, तरु चन्दन कर लोहा कंचन।
साधु संग सम दीपक गंगा, निज सम करहैं परसे अंगा।
साधु संग है भृंग स्वरूपा, शब्द सुनाय करहिं निज रूपा।
साधु संग जस सुर नर गावे, कह टेऊँ अहि अन्त न पावे ॥ ४ ॥

साधु संग है हरि का मन्दिर, जहँ रहता हरि ठाकुर सुन्दर।
साधु संग है श्रेष्ठ विमाना, पहुंचावत मन वाँछित थाना।
साधु संग नित अमृत वर्षे, जिस पीने से काल न कर्षे।
साधु संग है निर्मल दर्पन, तामें होवे आतम दर्शन।
साधु संग है सुख का सागर, कह टेऊँ करहैं बुद्धि नागर ॥ ५ ॥

सन्तों का संग अवगुन खोवे, वस्त्र की मल जल जिमि धोवे।
सन्तों का संग भव सिन्धु तारे, ज्यों बोहथ कर सागर पारे।
सन्तों का संग करत उतंगा, अलि कंज संग जिमि चढ़ हरि अंगा।
सन्तों का संग देत अनन्दा, सागर को जिमि देवहिं चन्दा।
सन्तों का संग शान्ति स्थाना, कह टेऊँ यह वेद बखाना ॥ ६ ॥

सन्त का दर्शन आनन्द दाता, कष्ट विघ्न दुख दोष निपाता।
सन्त का दर्शन पाप निवारे, जाति हीन अति अधम उद्धारे।
सन्त का दर्शन ताप मिटावे, मन में मंगल मोद बढ़ावे।
सन्त का दर्शन आश पुजावे, अन्तकाल जमदूत हटावे।
सन्त का दर्शन करत निहाला, टेऊँ खोलत भाग विशाला ॥ ७ ॥

सन्त सज्जन जहँ जहँ पग पाते, तहँ तहँ थल पावन बन जाते।
सन्त करहिं जिस अस्थल वासा, सब तीर्थ तहँ करैं निवासा।
सन्त करैं जहँ हरि गुन चर्चा, अमर करे तिहँ थल की अर्चा।
सन्त बैठ जहँ ध्यान लगावैं, तिस थल की रज ले सुर लावैं।
पावन ते पावन हैं सन्ता, कह टेऊँ मेलहिं भगवन्ता ॥ ८॥

पार ब्रह्म पूरन गोविन्दा, परम कृपालू सद बख़्शन्दा।
भव दुख भँजन सब सुख दाता, सब विधि समर्थ जग पितु माता।
सर्व व्यापक अन्तर्यामी, आनन्दमय तुम पूरन कामी।
सर्व शक्ति के तुम हो स्वामी, निशदिन करहू पाद नमामी।
कर कृपा दे सन्तनि संगा, कह टेऊँ दुख होवे भंगा ॥ ९॥

भो भगवन् मम यह अर्दासा, साधु संग में देहु निवासा।
कर्मों वश मैं जहँ जहँ जाऊँ, साधु संग को तहँ तहँ पाऊँ।
भावें भूखा नगन रहाओ, सन्तो के संग मोहि बसाओ।
सन्तों से मोहि दूर न करना, सन्त चरन में मुझ को धरना।
साधु संग बिन हित नहिं काहूँ, कह टेऊँ मैं ताँको चाहूँ ॥ १०॥

॥ दोहा ॥

महिमा ज्ञानी सन्त की, कहूँ सुनो चित्त लाय।
कह टेऊँ तिहँ संग कर, परमानन्द को पाय॥ ११॥

दशपदी (११)

द्वैत भाव नहिं देखे नैना, द्वैत भाव के कहे न बैना।
द्वैत भाव के सुने न वचना, द्वैत भाव की रचहिं न रचना।
द्वैत भाव नहिं चितवे मन में, द्वैत भाव नहिं धर किस जन में।
द्वैत भाव नहिं बुद्धि में आने, द्वैत भाव नहिं चित में ठाने।
सर्वहीं पूरन ब्रह्म पछाने, टेऊँ सन्त सो वेद बखाने ।। १ ।।

इक रस स्तुति निन्दा माहीं, दुख सुख में कब डोलत नाहीं।
काम क्रोध मद लोभ विहीना, सर्व वासना रहित प्रवीना।
राग द्वेष बिन निरहंकारी, निस्पृही स्व इच्छा चारी।
चित्त संतोषी तत्त्व विचारी, शान्ति रूप अति धीरज धारी।
सम दृष्टि निर्द्रोह अचिन्ता, कह टेऊँ सो ज्ञानी सन्ता ।। २ ।।

ब्रह्म भाव की करहैं चर्चा, ब्रह्म भाव से करहैं अर्चा।
ब्रह्म भाव का धरहैं ध्याना, ब्रह्म भाव से कथैं सुज्ञाना।
ब्रह्म भाव के पुस्तक पढ़ता, ब्रह्म भाव से कर्तव्य करता।
ब्रह्म भाव से भोजन खावे, ब्रह्म भाव से सब अपनावे।
जाँके मन नहिं भेद निशानी, कह टेऊँ सो ब्रह्म ज्ञानी ।। ३ ।।

खान पान लख धर्म प्राने, अहं धर्म बुद्धि का कर जाने।
संकल्प विकल्प मानत मन के, जनम मरन जानत इस तन के।
सकल कर्म इन्द्रियों के हेरे, घटना बढ़ना प्रकृति केरे।
कर्ता भोक्ता जीवहिं माने, अपने में ना रंचक आने।
ब्रह्म भाव जिस मति ठहरानी, कह टेऊँ सो पूरन ज्ञानी ।। ४ ।।

ब्रह्म लखे सो ब्रह्म ज्ञानी, ब्रह्म माहिं जिस वृति समानी।
एक पलक नहिं होते न्यारा, नितहीं रमता ब्रह्म मंझारा।
सब क्रिया तिहं ब्रह्महिं भासे, अपने में नित आप निवासे।
निज इच्छा से कछु नहिं धरता, पर इच्छा से क्रिया करता।
सुषुप्तिवत् रह जाग्रत माहीं, कह टेऊँ अन्य भासत नाहीं ॥ ५ ॥

परके तन ज्यों निज तन भासे, अहं ममत जिस लेश न आसे।
ब्रह्मात्ममय सब जग जोवे, जगत भाव सह कारण खोवे।
जल से जल हो नीमक जैसे, ब्रह्म भाव में राते तैसे।
द्वन्द्व रोग से रहत अरोगी, योग वियोग न भोग अभोगी।
अपने में नित आप समावे, कह टेऊँ नहिं आवे जावे ॥ ६ ॥

दुख में दुखिया सुख में सुखिया, यह वृत्ति धारे मनमुखिया।
दुख में सुखिया सुख में दुखिया, यह वृत्ती राखे गुरुमुखिया।
दुख सुख दोनों एक समाने, यह वृत्ती ज्ञानी जन ठाने।
दुख सुख जांको लेश न भासे, सर्व काल इक ब्रह्म प्रकासे।
ऐसी वृत्ती धरे विज्ञानी, कह टेऊँ तां पर कुर्बानी ॥ ७ ॥

सकल जगत को सत् कर माने, ये निश्चय अज्ञानी आने।
मायिक रचना दुखमय हेरे, यह निश्चय वैरागी केरे।
मिथ्या सकल जगत को लाखत, यह निश्चय योगी का भाखत।
तीन काल में जग ना भासे, यह निश्चय ज्ञानी का आसे।
ज्ञानी का है निश्चय निर्मल, टेऊँ ब्रह्म जो देखत निश्चल ॥ ८ ॥

जहँ जहँ जावे ब्रह्म ज्ञानी, तहँ तहँ होय विपति की हानी।
कर कृपा जिहँ पर कर राखे, जग बन्धन तिहँ होवे नाखे।
करुणा कर जिसको अपनावे, आतम का रंग तिहँ चढ़ जावे।
जो जो वस्तु काम में लावे, सो सो वस्तु उत्तमता पावे।
ताँके संग जाँकी रति लागी, कह टेऊँ सो हो बड़भागी ॥ ९ ॥

धन्य धन्य सो ब्रह्मज्ञानी, भेट धरूँ तिस मन बुद्धि बानी।
ताँका दर्शन सब सुख देवे, कोटि जन्म के अघ हर लेवे।
जहँ जहँ वह निज चरन पधारे, तहँ तहँ तीर्थ होवे सारे।
जहँ जहँ अपनी दृष्टि पसारे, तहँ तहँ जीव अनन्त उद्धारे।
जां पर अपनी धारे दाया, कह टेऊँ तिहँ छुहत न माया ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

दुर्लभ मानुष तन मिला, हरि सुमरो मन माहिं।
कह टेऊँ निज रूप लख, सफल करो तुम ताहिं ॥ १२ ॥

दशपदी (१२)

मानुष तन है रतन अमोलो, विषयों में ना वृथा रोलो ।
मानुष तन है अमृत प्याला, डार खाक में ना मतवाला।
नर तन पावन मन्दिर जानो, तामें क्रोध कूकर नहिं ठानो।
नर तन कंचन पात्र माहीं, धर दुर्गन्ध विषय तुम नाहीं।
नर तन सुरतरु से फल पाओ, कह टेऊँ ना अफल गँवाओ ॥ १ ॥

श्रवन सफल सुनैं हरि गाथा, हरि गुरु नमे सफल सो माथा।
नैन सफल हरि दरस निहारे, श्वास सफल गुरु मन्तर धारे।
हाथ सफल गुरु सेव कमावे, पाद सफल शुभ मारग जावे।
जीभ सफल कर हरि गुण गाना, द्रव्य सफल शुभ पात्र दाना।
सर्व सफल हरि हेत लगावे, कह टेऊँ सो मुक्ती पावे ॥ २॥

निशवासर हरि जप मन मेरा, भजन करन का अवसर तेरा।
इस अवसर को सुर नर चाहत, मूण्ढ विषय में काहिं गँवावत।
समय गया फिर आय न हाथा, ज्यों फल गिर न लगे तरु साथा।
अवसर वृथा नाहिं गँवाओ, शुभ साधन के माहिं लगाओ।
नाम जपो शुभ कर्म कमाओ, टेऊँ जीवन सफल बनाओ ॥ ३॥

निज अवसर जो खोवत वृथा, जनम जनम सो पावत व्यथा।
सोई पण्डित कर्म विधाता, वृथा जो ना समय गँवाता।
तीन लोक का जाय समाजा, पर न गँवाओ समय अकाजा।
सन्त वेद नित तिसहिं धिकारे, विषयों में जो समय गुज़ारे।
बीते का अब शोक न कीजे, टेऊँ आगे को रख लीजे ॥ ४॥

मात पिता सुत मित्र लुगाई, पुनि पुनि मिलहैं भैनें भाई।
रवि शशि धरनी पावक पानी, पुनि पुनि ये भी मिलहैं प्रानी।
माणिक मोती धन सुख सम्पति, पुनि पुनि ये भी होय प्रापति।
परन्तु अवसर जो यह जावे, यतन किये फिर हाथ न आवे।
ताँते अबहीं चेत सुजाना, कह टेऊँ जपले भगवाना ॥ ५॥

कदर न अवसर का है जांको, अपना कदर न रंचक ताँको।
अवसर का जो कदर पछाने, देव ताहिं कर सबको माने।
जो अवसर जिहँ भान्ति लगावे, अवसर तिहँ विधि ताहिं बनावे।
अवसर का है मरम महीना, जानत गुरुमुख को प्रवीना।
सत्गुरु हरि की जिस पर दाया, कह टेऊँ तिस सफल बनाया ॥ ६ ॥

पारब्रह्म बिम्ब दर्पन माया, जान जीव यह ताँकी छाया।
जे चाहो सुख मान बड़ाई, तो सब अर्पो बिम्ब के ताईं।
बिम्ब अर्पे बिन छाय न पावे, बात यही सत् वेद बतावे।
मूल सिंचे बिन शाख न फूले, हरि तज हौं मैं कर क्यों भूले।
मैं मेरा हरि अर्पन कीजे, कह टेऊँ निज सुख को लीजे ॥ ७ ॥

सुरतरु तज क्यों सेवहु कीकर, सागर तज क्यों सेवहु सरवर।
सुरभी तज क्यों रासभ सेवहु, अमृत तज क्यों विष को लेवहु।
दूध त्याग क्यों छाछ बिलोरहु, माणिक तज क्यों पत्थर बटोरहु।
तरुवर तज क्यों सेवहु छाया, मालिक तज क्यों सेवहु माया।
चेतन तज क्यों जड़ तुम पूजत, टेऊँ क्यों नहिं आतम बूझत ॥ ८ ॥

अपने घर की वस्तु न जानत, पर घर की बहु वस्तु पछानत।
अपने घर की राह न सूझत, अपर भवन मग बहु विधि बूझत।
अपने पास वस्तु नहिं देखे, दूर पदारथ पुनि पुनि पेखे।
अपने को नहिं आप पछाने, औरों के कुल नाम बखाने।
निज घर आग लगा जो सोवे, कह टेऊँ सो जीवन खोवे ॥ ९ ॥

माया दर्पन ईश्वर बिम्बा, तामें निश्चय जग प्रतिबिम्बा।
ईश्वर सुख मय जग भी वैसा,जो जस देखे तिहँ हो तैसा।
मूण्ढ मती जग दुख मय देखत, बोधमती सब सुख मय पेखत।
दर्पन का है दोष न कोई, निज मुख सरस दिखावत सोई।
ब्रह्मज्ञान से द्वैत हटाओ, कह टेऊँ तुम आनन्द पाओ ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

मोह नींद से जागिये, जग को झूठा जान।
कह टेऊँ गुरु ज्ञान ले, पाओ पद निर्बान॥ १३ ॥

दशपदी (१३)

रे मन अविद्या निद्रा त्यागो, हरि सुमरन में उठ कर लागो।
जागन की है एही वेला, भाग बड़े मिलिया शुभ मेला।
जागन में अब देर न कीजे, गफ्लत आलस तुरत तजीजे।
अवसर बीते फिर पछुतावहिं, हाथ मले बिन हाथ न आवहिं।
जागन के बिन दुख ना जावे, कह टेऊँ यों ज्ञानी गावे ॥ १ ॥

चोर नींद में जिस लुट जावे, तांको कोय न दोष लगावे।
जागत जिस धन तस्कर लेवे, सब जन तिसको दूषण देवे।
मानुष का तन धरके आया, उत्तम भारत खण्ड को पाया।
सन्तनि संग पुनि शास्त्र चिन्तन, चार भान्ति से होया जागन।
इतने पर जो घर न बचावे, कह टेऊँ सो मूण्ढ कहावे ॥ २ ॥

तन नँगर में पांचों चोरा, लूटत हैं तुमको निश भोरा।
जानत ना तिहँ मूण्ढ अनारी, लूट बनाया तोहि भिखारी।
तेरा आतम रूप छिपाया, जड़ दुखमय तन तोहि दिखाया।
झूठे तन को निज वपु माना, ब्रह्म भाव नहिं उर में आना।
गुरु से मिल ये चोर निकालो, कह टेऊँ निज रूप संभालो ॥ ३ ॥

जग में यतन करे बहु भारा, दूर न होवे मोह गुबारा।
सत्गुरु कृपा करहैं जबहीं, जीव नीन्द से जागे तबहीं।
गुरु की कृपा तबहीं होवे, सेवा कर जब हौं मैं खोवे।
ब्रह्म बोध ले गुरु से पूरन, वेग करो सब संसा चूरन।
जन्म मरन का दूख मिटाओ, कह टेऊँ निज ब्रह्म समाओ ॥ ४ ॥

देखन मात्र यह प्रपंचा, नट बाज़ी वत हरि रचि सिंचा।
पूरन होय न इस ते आसा, मृग जल ते ज्यों बुझे न प्यासा।
यत्न किये जग हाथ न आवे, स्वपने दाम ज्यों कोय न पावे।
इसते काज सरे को नाहीं, भूत अग्नि वत निष्फल आहीं।
सार अंश कछु ना जग माहीं, कह टेऊँ तज ममता ताहीं ॥ ५ ॥

जग में बहुत जन्म तुम सोया, अजहूँ तुझको मरम न होया।
अपने घर की सुधि विसराई, पर घर से तुम प्रीति लगाई।
साचे धन की सुरति विसारी, मिथ्या धन में ममता धारी।
परम मित्र से हेत न लाया, जन्म शत्रु से नेह लगाया।
हौं मैं कर बहु जन्म गँवाया, कह टेऊँ नहिं आतम ध्याया ॥ ६ ॥

चले न संग तिहँ कीनी प्रीती, थिर न रहे तिहँ पर प्रतीती।
वैरी जो तिहं मित्र पछाने, जो अपने नहिं अपने जाने।
मरने को तुम मानत हासी, दुखदाई जानत सुखरासी।
कहां गई तेरी मति मारी, विष को जानत सुधा अनारी।
सत्गुरु सन्तों से मति लीजे, कह टेऊँ हित अपना कीजे ।। ७ ।।

भोगों का है बन्धन भारा, बान्धे इसमें जीव अपारा।
कूप माल ज्यों फिर फिर फिरते, ऊंच नीच बहु योनी धरते।
मात गर्भ में तन को धारे, सहत कष्ट ते कष्ट करारे।
बान्धे तस्कर ज्यों दुख पावहिं, काल दूत नित ताहिं डरावहिं।
ब्रह्मज्ञान से यह दुख जावे, कह टेऊँ यों वेद बतावे ।। ८ ।।

बन्धन जाति पाति धन धामा, बन्धन मात पिता सुत वामा।
बन्धन मोह मान मद ममता, बन्धन आसा तृष्णा चिन्ता।
बन्धन काम क्रोध अज्ञाना, बन्धन मन के विकल्प नाना।
बन्धन भेद भ्रम है सारा, सबसे अहं बन्धन है भारा।
बन्धन बांधा सब जग जानो, कह टेऊँ को मुक्ता मानो ।। ९ ।।

बन्धन सारे तबहीं छूटे, अहं बुद्धि जब जड़ से टूटे।
अहं बुद्धि तब जड़ से नासे, ब्रह्म बोध जब उर प्रकासे।
महा वाक्य से हो ब्रह्म बोधा, मिट जावे सब वैर विरोधा।
सार शब्द ले गुरु से मीता, बन्धन हरके होय अभीता।
निर्भय होके कट जम फांसी,कह टेऊँ सुख पा अविनासी।। १० ।।

।। दोहा ।।

रे मन चाहो सूख जो, हरि हृदय में धार।
कह टेऊँ हरि नाम जप, भव से उतरो पार।। १४।।

दशपदी (१४)

मन मेरे सुमरो हरि नामा, पूरन होवे सकले कामा।
मन मेरे नित हरि गुन गाओ, मात गर्भ में फेर न आओ।
मन मेरे ले हरि की ओटा, जम की कबहुँ न लागे चोटा।
मन मेरे ले हरि की शरनी, भव जल तारैं होके तरनी।
हरि को तज तुम अनत न धाओ, कह टेऊँ जे हित को चाहो ।। १ ।।

मन मेरे नित हरि हरि बोलो, भव सागर में कबहुँ न डोलो।
मन मेरे हरि नाम उचारो, अपना सुन्दर जन्म सुधारो।
मन मेरे कर हरि से प्रेमा, उभय लोक में होवे क्षेमा।
मन मेरे धर हरि का ध्याना, काल अरी का लगे न बाना।
हरि का नाम जपे तुम निशदिन, कह टेऊँ पा हरि का दर्शन ।। २ ।।

मन मेरे कर हरि का सुमरन, सफला होवे तेरा नर तन।
मन मेरे कर हरि की आसा, कारज होवैं तेरे रासा।
मन मेरे धर हरि विश्वासा, दूख दरद सब होवे नासा।
मन मेरे नित हरि पद ध्याओ, जहां तहां तुम शोभा पाओ।
हरि का नाम जपे जो हरिजन, कह टेऊँ है सोई धन धन ।। ३ ।।

मन मेरे जप हरि का जापा, तोहि न लागे तीनों तापा।
मन मेरे सुन हरि उपदेशा, निर्भय पाओ आतम देशा।
मन मेरे पा हरि का ज्ञाना, अनर्थ हेतु मिटहिं अज्ञाना।
मन मेरे तुम हरि को मानो, और किसी की आस न ठानो।
साधु संग हरि सुमरन कीजे, कह टेऊँ हरि अमृत पीजे ।। ४ ।।

मन मेरे हरि सुरतरु सुन्दर, मन मेरे हरि मुक्ती मन्दिर।
मन मेरे हरि आनन्द राशी, मन मेरे हरि है अविनाशी।
मन मेरे हरि सबका ज्ञाता, मन मेरे हरि फल प्रदाता।
मन मेरे हरि पातक हारी, मन मेरे हरि जन हितकारी।
साधु संग से हरि को जानो, कह टेऊँ पा सूख महानो ।। ५ ।।

मन मेरे हरि संत सहायक, चतुर पदारथ मंगल दायक।
मन मेरे हरि जग पित माता, दावन पालक दीन त्राता।
मन मेरे हरि दीन दयाला, बन्धन काटत करत निहाला।
मन मेरे हरि अति कृपाला, कोटि जनम के कटहिं जँजाला।
साधु संग जप हरि भगवाना, कह टेऊँ पा पद निर्बाना ।। ६ ।।

मन मेरे हरि हरता करता, सारी सृष्टी का है भरता।
मन मेरे हरि माया नायक, जीव चराचर तांके पायक।
मन मेरे हरि पुरुष निरंजन, जांका सुमरन नरक निकन्दन।
मन मेरे हरि राजन राजा, जिहँ सुमरे सब होवैं काजा।
हरि सुमरो तुम सन्तनि संगा, कह टेऊँ होवैं दुख भंगा ।। ७ ।।

मन मेरे हरि सद्बखशन्दा, ताहिं विसारत मूर्ख मन्दा।
मन मेरे हरि सद्महिरवाना, ताहिं विसारत मूण्ढ अजाना।
मन मेरे हरि दाना बीना, ताहिं विसारत मति के हीना।
मन मेरे हरि ग़रीबनिवाज़ा, ताहिं विसारत निपट निलाजा।
हरि विसरत होवैं दुख भारा, कह टेऊँ अब चेत गँवारा ॥ ८ ॥

गर्भ कुण्ड में जो रखवारा, लाज न आवत ताहिं विसारा।
अंत काल जो होय सहाई, तांसे मूण्ढ न प्रीति लगाई।
बिन मांगे जो देत अहारा, निमष न तांका नाम उचारा।
प्रान देहि जो तोहि चलावत, तिस हरि का तुम गुन नहिं गावत।
अबलौं मन माया में भ्रमत, कह टेऊँ हरि नाम न सुमरत ॥ ९ ॥

राज भोग सुख संपति भोगा, मानुष तन मन बुद्धि संयोगा।
कँचन रूपा माणिक मोती, सुन्दर मंदिर जगमग ज्योति।
मात पिता सुत बंधु परिवारा, भूषण वस्त्र अनिक प्रकारा।
इत्यादिक जिस हरि ने दीना, तिस हरि का तुम भजन न कीना।
अब भी हरि का लेहु सहारा, कह टेऊँ तव होय उद्धारा ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

चंचल जग की प्रीति तज, जे सुख चाहो मीत।
टेऊँ आतम अचल से, निशदिन करले प्रीत ॥ १५ ॥

दशपदी (१५)

चंचल जग से ना कर हेता, थिर न रहे ज्यों मुष्ठी रेता।
चंचल से तुम प्रीती तोड़ो, निश्चल में नित प्रीती जोड़ो।
चंचल से मन चंचल होवे, निश्चल से चंचलता खोवे।
चंचल का फल जानो नाशी, निश्चल का फल है अविनाशी।
चंचल कबहूँ होत न निश्चल, टेऊँ निश्चल होय न चंचल ॥ १ ॥

चंचल माया का विस्तारा, चंचल रज तम सत्त्व पसारा।
चंचल तीन भवन ब्रह्मण्डा, चंचल सात द्वीप नव खण्डा।
चंचल रवि शशि अहनिश काला, चंचल सागर सरिता ताला।
चंचल गिरि तरु भार अठारा, चंचल पांचों भूत अकारा।
सब जग चंचल थिर ना कोई, कह टेऊँ थिर चेतन होई ॥ २ ॥

चंचल मन बुद्धि चित्त अहंकारा, चंचल पांचों विषय विकारा।
चंचल मात पिता परिवारा, चंचल तन धन मित सुत दारा।
चंचल हय गय महल विशाला, चंचल कनक रुपा मणि लाला।
चंचल सुख दुख प्रान अपाना, चंचल काम क्रोध मद माना।
दृष्टिमान सब चंचल मानो, कह टेऊँ थिर आतम जानो ॥ ३ ॥

चित्र माहिं चित लाओ नाहीं, चित्र वृक्ष फल देत न काहीं।
चित्र अग्नि कर शीत न नासा, चित्र नीर कछु हरै न प्यासा।
चित्र कोई ना काज संवारे, केवल देखन मात्र सारे।
चित्रों पर जो मोहित होई, होय दुखी पछुतावे सोई।
चित्र छोड़ कर सुमर चितेरा, कह टेऊँ हित होवैं तेरा ॥ ४ ॥

जगत पदार्थ स्वप्न समाना, ताँ पर ममता कर न अजाना।
साथ न चालहिं सकल समाजा, खाली कर गये बड़ महराजा।
पल क्षण में मिट जावत एही, मानत हो तुम सत् कर जेही।
मोह नींद कर भासत सृष्टी, ज्ञान जाग से होय अदृष्टी।
इस जग पर ना कर भरवासा, टेऊँ लख आतम सुखरासा ।। ५ ।।

सिकता से भल निकले तेला, बाँझ पूत भल खेलैं खेला।
आग किसी को भल नहिं जाले, पांव बिना भल को मग चाले।
पश्चिम दिश भल ऊगे भानू, गनै कोय भल जल परमानू।
नभ में हो भल पुष्प अशेषा, कछप पीठ पर हो भल केशा।
तो भी सुख न मिले भव माहीं, कह टेऊँ मत राचो ताहीं ।। ६ ।।

रे मन तज तुम जग के भोगा, भोगों से उपजे बहु रोगा।
भोग विषय की तज तूं आसा, भोग आस है जम की फासा।
भोग आस को तुरत त्यागो, भोग अग्नि ते दूरहुँ भागो।
भोग पदार्थ क्षण भंग सारे, मुक्ती के प्रतिबन्धक भारे।
भोग विषय ते होय उदासा, टेऊँ आतम की कर आसा ।। ७ ।।

भोग आस कर चित्त हो चंचल, चंचल चित्त में सुख ना इक पल।
क्षण क्षण माहिं विषय को चाहत, एक छोड़ दूजे पर धावत।
विषय सूख हित उद्यम करहैं, एक पलक धीरज नहिं धरहैं।
भटक भटक यों जनम गँवावे, मर कर चौरासी में जावे।
भोग आस है दुख की मूला, टेऊँ आतम सुख अनुकूला ।। ८ ।।

भुवन चतुर्दश में सुख जेते, आतम सुख बिन दुखमय तेते।
विषय सूख में लंपट जे हैं, दीन दुखी अति मानुष ते हैं।
कोटि कल्प लौं बहु रस खावे, तो भी तृष्णा ना कब जावे।
धनपति सुरपति भूपति सबहीं, तिन भी तृप्त भयी ना कबहीं।
विषय भोग ते शान्ति न आवे, कह टेऊँ ज्यों घृत अगि पावे ॥ ९ ॥

ब्रह्म ज्ञान बिन जग थिर भासे, ब्रह्म ज्ञान ते सर्व विनासे।
स्वयं सत्ता नहिं जग की राई, स्वपन पदार्थ ज्यों समुदाई।
आदि अन्त कछु इसका नाहीं, भासत मध्य काल के माहीं।
तांते इससे नेह न लावहु, सूख न रँचक इससे पावहु।
निश्चल आतम से कर प्रीती, टेऊँ पा सुख जीवनमुक्ती ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

आसा तृष्णा मत करो, झूठा है संसार।
कह टेऊँ संतोष धर, सुमरो सत्कर्तार॥ १६ ॥

दशपदी (१६)

माया कृत प्रपंच पसारा, मिथ्या जड़ दुखमय है सारा।
यामें पड़ को भया न सुखिया, अपने को सब भाखत दुखिया।
सुरपति नरपति धनपति जेते, जग में अति दुखिया हैं तेते।
और जीव किस गिनती माहीं, जग में पाया सुख किस नाहीं।
तांते जग की तजले आसा, कह टेऊँ जप हरि सुख रासा ॥ १ ॥

झूठे जग से होय निरासा, स्वपने धन से हो न सुपासा।
विषय सूख पर क्यों ललचावत, गगन फूल से गन्ध न आवत।
देह गेह का कर न गुमाना, सिन्धु लहर सम थिर न अजाना।
मूँढ न दौड़ो माया के हित, जानो बादल की छाया वत।
आयू भी थिर नाहिं अज्ञानी, टेऊँ काचे घट ज्यों पानी ॥ २॥

ममता मन से जबहीं छूटे, बन्धन जग के तबहीं टूटे।
वृत्ती अर्न्तमुख हो जबहीं, आतम दर्शन होवे तबहीं।
आतम दर्शन जबहीं करहैं, जन्म मरन दुख तबहीं हरहैं।
तृष्णा से जब होवे शोषा, पूरण तब हो मन संतोषा।
जबहीं मन की हो क्षय आसा, कह टेऊँ हो सब दुख नासा ॥ ३॥

जिसमें तृष्णा होय विशाला, सो नर निश्चय जान कंगाला।
सिन्धु उदर को भरन सुहेला, तृष्णातुर को भरन दुहेला।
तीन भुवन के पाय समाजे, तृष्णावन्त न कबहूँ राजे।
तृष्णावान न थिरता पावे, बहुत द्रव्य हित निशदिन धावे।
तृष्णा से है शोषा को जन, कह टेऊँ संतोष जिसी मन ॥ ४॥

माया कृत पदार्थ सारे, निश्चय जाने सोय असारे।
किस वस्तू की चाह न करहीं, अपने चित प्रसन्नता धरहीं।
आतम रस में नित अलिसावे, निज स्वरूप में सुरति समावे।
और रहा नहिं करने योगा, आतम रस का भोगत भोगा।
ग्रहण त्याग नहिं बन्ध न मोषा, कह टेऊँ जिहँ उर संतोषा ॥ ५॥

जांके मन सन्तोष महाना, और न तां सम को धनवाना।
जांके मन सन्तोष निवासा, ताहिं न उपजे रँचक आसा।
जांके मन सन्तोष भण्डारा, तांको सब जग करत जुहारा।
जांके मन सन्तोष समाजा, सो जन है राजों का राजा।
सन्तोषी आतम रस पीवे, कह टेऊँ सो जुग जुग जीवे ॥ ६ ॥

भाग तुम्हारे में है जितना, सहजे आन मिले तुझ तितना।
चिन्ता तज धर मन सन्तोषा, राम सुमर कर राग न रोषा।
सोच करे क्यों अवसर खोवत, सोच किये कछु अधिक न होवत।
हरि इच्छा से सब कुछ होवे, और न हो भावें हस रोवे।
हरि भाणे पर प्रसन्न रहिये, कह टेऊँ तुम सुख को लहिये ॥ ७ ॥

जिहँ हरि को सत् वेद बखानत, तांसे तुम क्यों नेह न ठानत।
जो प्रभु सुख दे इत उत लोका, ताहिं न सुमरत यह बड़ शोका।
प्रबल शत्रु हैं जो जग तेरे, तांको जानत है मित मेरे।
सकल जगत जो चलने हारा, तांसे करते मोह अपारा।
काट चन्दन तुम कीकर बोवत, कह टेऊँ हित क्यों तव होवत ॥ ८ ॥

अपने कीने तुम पित माता, अपने कीने मीत भ्राता।
अपने कीने तुम धन धामा, अपने कीने सुत अरु वामा।
अपना कीना कुल परिवारा, अपना कीना जग व्यवहारा।
अपना कीना तन यह सुन्दर, अपना कीना मठ पुनि मन्दिर।
एक न हरि को अपना कीना, टेऊँ धिक् धिक् है तव जीना ॥ ९ ॥

ताहिं न सुमरा जिहँ तन दीना, व्यर्थ तेरा खाना पीना।
ताहिं न सुमरा जिहँ सुख दीया, जन्म पायके क्या तुम कीया।
ताहिं न सुमरा जिहँ दी माया, धिक् धिक् मानुष जन्म गँवाया।
ताहिं न सुमरा जिहँ मति दीनी, मूर्ख तुमने लाज न कीनी।
आलस तज अब भज हरि नामा, कह टेऊँ पाओ सुख धामा ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

कर्म करो शुभ रैन दिन, फल को मांगो नाहिं।
कह टेऊँ बिन कर्म के, मिले न सुख जग माहिं ॥ १७ ॥

दशपदी (१७)

कर्म करन में तव अधिकारा, तांते कर्म करो निर्धारा।
कर्म बिना को रह न सके ही, नेम अटल प्रकृति का येही।
कर्म रूप यह सृष्टी सारी, कर्म बिना को हो न सुखारी।
जड़ चेतन मय जीव सु जेते, कर्म करन में तत्पर तेते।
अपने अपने कर्म द्वारे, कह टेऊँ सुख पावत सारे ॥ १ ॥

सहज कर्म के मेटन माहीं जग में कोऊ समर्थ नाहीं।
कठपुतली वत सब जन करते, कोऊ किसको रोक न सकते।
तीन गुणों की बांधे डोरी, कर्म करत सबहीं वरज़ोरी।
तांते तुम निज कर्म कमाओ, यत्न करे चित्त चाह बढ़ाओ।
कर्म हीन का जीवन फीका, कह टेऊँ ज्यों शव का टीका ॥ २ ॥

वेद विहित कर कर्म अकामा, मन को देवत वह विश्रामा।
अहं बुद्धि ना इस में राखो, फल की आसा मन से नाखो।
अचल बुद्धि से कर्म कमाओ, चपल बुद्धि को तुरत हटाओ।
हरि अर्पन सब कर्म करो तुम, भोग विषय की चाह हरो तुम।
कर्म बन्ध यों तोहि न बांधै, कह टेऊँ जो निशदिन साधै ।। ३ ।।

कर्म अकामी नाश न होवत, अल्प कर्म भी भय को खोवत।
क्रम क्रम ऊँचे ले जावैं, निर्भय निर्दुख पद पहुंचावैं।
लाभ हानि में समता धारे, द्वन्द्व रोग से होय न्यारे।
कर्तव्य बुद्धि पुनि लोक हितारथ, कर्म करे तिस सिद्ध परमारथ।
कर्म हीन नर नीचे गिरता, कह टेऊँ मृत्यू मुख परता ।। ४ ।।

माया मय जे त्रिगुण आहीं, कर्म योग्यता है तिन माहीं।
जिस वस्तू में गुण है जैसा, तांसे कारज होवत तैसा।
वृथा तामें कर अहँकारा, दूख सहत तुम बारम्बारा।
कर्त्तापन का तज अभिमाना, पाओ अविचल सुख स्थाना।
गुरु गम ले यह गर्व हरीजे, कह टेऊँ इस विधि दुख छीजे ।। ५ ।।

तन में तेरा तनिक निवासा, काहिं करो तुम बहुती आसा।
दो दिन है जग जीवन तेरा, काहिं करत हो तेरा मेरा।
पल छिन जान कुटुम्ब का मेला, काहिं करत तासूं हस खेला।
धन यौवन कब थिर नहीं रहता, क्यों करते हो तामें ममता।
राम नाम इक संगी साचा, कहे टेऊँ यह जग है काचा ।। ६ ।।

पाप कपट कर द्रव्य कमाते, निज मित्रों को आन खिलाते।
एक पलक नहिं छोड़त गेहा, दिन दिन करते अधिक सनेहा।
सत्संग की तोहि बात न भावे, मूण्ढ मर्कट ज्यों मोह बढ़ावे।
काल दूत जब तोहि सतावत, तब को बन्धु निकट ना आवत।
राम नाम हो अन्त सहाई, कह टेऊँ जप राम सदाई ॥ ७॥

लेवो रामनाम रस लेवो, झूठे विष रस को तज देवो।
राचो राम नाम रंग राचो, झूठे जगत रंगों से बाचो।
पावो पावो हरि से प्रेमा, मछली का ज्यों जल से नेमा।
बैठो बैठो सन्तनि संगा, जांसे हरि का लागे रंगा।
त्यागो त्यागो तन अभिमाना, कह टेऊँ ले गुरु से ज्ञाना ॥ ८॥

नितहीं नितहीं हरि को सेवो, सकल जगत हरिमय लख लेवो।
चालो चालो हरि के द्वारे, सत्संग जानो हरि दर्बा रे।
सुनले सुनले हरि की बानी, सन्त वेद गुरु जोय बखानी।
धारो धारो हरि के धर्मा, सन्तों से ये बूझो मर्मा
करले करले हरि की पूजा, टेऊँ इक हरि सन्त न दूजा ॥ ९॥

मंगलमय है हरि का दर्शन, देखन से होवे मन प्रसन्न।
निर्मल है नित हरि का नामा, कल्प वृक्ष के सम सुखधामा।
अविचल हरि जस अपर अपारा, जांके गावत हो भव पारा।
परम पवीत्र हरि के चरना, मुक्ति हेतु तुम चित में धरना।
सबते ऊँचा हरि प्रतापा, कह टेऊँ हरि जप कट पापा ॥ १०॥

॥ दोहा ॥

हरि दर्शन की आस जिहँ, सो जिज्ञासू जान।
टेऊँ गुरु सेवा करे, गुरुमुख सो पहिचान॥ १८॥

दशपदी (१८)

हरि दर्शन की जां मन आसा, अहनिश जग से रहे उदासा।
हरि मारग में हरदम चाले, काम क्रोध के कण्टक टाले।
भोग विषय तज दोष निकाले, विवेक से निज रूप समाले।
मन इन्द्रियों का संयम धारे, स्थिर होय गुरु शब्द विचारे।
हरि बिन दूजी आस न जासू, कह टेऊँ सो जान जिज्ञासू ॥ १ ॥

गुरु चरनों में जांका प्रेमा, गुरु का मन्त्र जपे नित नेमा।
गुरु की आज्ञा कबहुँ न टाले, गुरु के भाणे में नित चाले।
गद् गद् हो गुरु के गुन गावे, गुरु पद की रज सीस चढ़ावे।
गुरु आगे ना आप जनावे, दुविधा दुर्मति कपट नसावे।
गुरु सेवा में होवे सन्मुख, कह टेऊँ सो जानो गुरुमुख ॥ २ ॥

साधु संगत में नितप्रति आवे, सन्तों आगे सीस झुकावे।
सर्व जगत का फुरना त्यागे, हरी कथा रस में अनुरागे
सन्त दरस में दृष्टि लगावे, सन्त वचन में सुरति मिलावे।
श्रवण कर मन माहिं विचारे, दुर्गुण तज शुभ गुण को धारे।
हरि की कथा माहिं जो राचा, कह टेऊँ सो श्रोता साचा ॥ ३ ॥

साचे मीठे वचन उच्चारे, सन्त गुरु हरि दरस निहारे।
सत् शास्त्र पुनि हरि जस सुनता, गोविन्द के गुन सदहीं गुनता।
जागत सोवत करत विचारा, हरदम करहैं सत्य व्यवहारा।
असत् पदार्थ सर्व त्यागे, सत्य वस्तु में नित अनुरागे।
राम रंग में मति जिस रंगी, कह टेऊँ सो है सत्संगी ॥ ४॥

उमंग उमंग हरि के गुन गावे, प्रेम न हृदय माहिं समावे।
भोग विषय की करे न आसा, लोभ मोह मद काटे फासा।
देश काल कछु वस्तु न देखे, हरि का एक प्रेम ही पेखे।
हरि गुण गावत नीर बहावे, देह गेह की सुधि बिसरावे।
हरि प्रेम है जीवन जांको, कह टेऊँ लख प्रेमी तांको ॥ ५॥

प्रभू का सब हुकम पछाने, मन में हौं मैं अल्प न आने।
कर्म करे सब हरि को अर्पन, धर्म दया हो भक्ती सम्पन्न।
पाप कपट छल दम्भ न द्रोहा, राखे मत्सर मान न मोहा।
हारे आप न और हरावे, हो निर्मान हरी गुण गावे।
निमष तजे नहिं हरि पद वासा, कह टेऊँ सो है हरिदासा ॥ ६॥

हरि इच्छा जाने निज इच्छा, हरि मनसा जाने निज मनसा।
हरि चिन्ता जाने निज चिन्ता, हरि ममता जाने निज ममता।
हरि का भाणा जिस मन भावे, सोय करे जो हरी करावे।
सब कुछ हरि लख आप न माने, आदि अन्त मध्य हरि इक जाने।
मैं मेरा हरि माहिं मिलावे, कह टेऊँ वह भक्त कहावे ॥ ७॥

भूल न देखे किसका दोषा, झूठ कहे ना करहैं रोषा।
श्रवण से न सुने पर निन्दा, मन से पर का चितै न मन्दा।
अहंकृति को बुद्धि से त्यागे, इन्द्रियों से न विषय में लागे।
दुष्ट जनों से अंक न लावे, दुर्वस्तुनि की गन्ध हटावे।
अंग अंग हरि भक्ती भरपूरा, कह टेऊँ सो वैष्णव पूरा ॥ ८ ॥

जड़ चेतन का करे विवेका, जड़ तज जप चेतन हरि एका।
भोग विषय से रोके मन को, मोह तजे मिथ्या तन धन को।
आसुरी संपति सकल त्यागे, देवी संपति में अनुरागे।
सत्गुरु वचने हरि लख लेवे, हरि वपु जान सर्व को सेवे।
भेद भाव जिहँ कीना खण्डित, कह टेऊँ वह पूरण पण्डित ॥ ९ ॥

प्राण रक्षा हित भोजन भुंचे, अधिक स्वाद की तृष्णा मुंचे।
इन्द्रिय राखहिं निज आधीना, मनके फुरने हरहिं मलीना।
स्वस्थ शरीर रखहिं हर काला, कुटुम्ब मोह से होय निराला।
वेद विहित करहैं व्यवहारा, निषिद्ध कर्म से करहिं किनारा।
सदाचार के निश्चल नियमी, कह टेऊँ सो जान संयमी ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

राम नाम जप प्रेम से, पाओ सुख का धाम।
कह टेऊँ बिन राम के, जीवन है बेकाम ॥ १९ ॥

दशपदी (१९)

राम राम जप राम प्यारा, राम नाम से हो निस्तारा।
राम नाम को चित्त में धारो, राम नाम को नाहिं विसारो।
राम नाम धन संचो मन में, राम नाम गूंजो अधरन में।
राम नाम की गाथा सुनले, राम नाम की महिमा गुनले।
राम नाम की पढ़ले पोथी, कह टेऊँ अन बातें थोथी ॥ १ ॥

राम सुमर धर रामहिं ध्याना, राम रटो गह रामहिं ज्ञाना।
राम नाम रस नितहीं पीवो, राम नाम जप जुग जुग जीवो।
राम नाम का ले आधारा, राम नाम पत राखन हारा।
राम नाम भवसागर सेतू, राम नाम सुख संपति हेतू।
राम नाम अघ ओघ निवारे, कह टेऊँ अति अधम उद्धारे ॥ २ ॥

राम रमत सब हृदय अन्तर, नटवर कौतुक करे निरन्तर।
बहु विधि प्रभुहीं खेलत खेला, कहँ बिछुड़त कहँ करते मेला।
ज्यों तिस भाव बाज़ी लावे, कहाँ प्रकट कहँ आप छिपावे।
स्वांगी ज्यों बहु स्वांग बनावे, कहँ स्वामी कहँ दास कहावे।
बाज़ी नट द्दष्टा सब सोई, कह टेऊँ है और न कोई ॥ ३ ॥

सागर में को किसहिं गिरावे, राम जपत तिस जल न डुबावे।
आग विषे किस दुश्मन डाले, राम जपत तिस अगि ना जाले।
बन में को किस मारन आवे, राम जपत तिहँ नाहिं सतावे।
गिरि से किसको कोय गिरावे, राम जपत गिरि तां न दुखावे।
राम जपन में जो अनुरागे, कह टेऊँ दुख ताहिं न लागे ॥ ४ ॥

राम भजन से शोभत जीया, शोभत नारी ज्यों संग पीया।
राम भजन से शोभत काया, नीत धर्म से जैसे राया।
राम भजन से शोभत रसना, नीमक से ज्यों भावत अशना।
राम भजन से शोभत आयू, त्रिविध भूषण से जिमि वायू।
राम भजन से शोभत चाली, टेऊँ जिमि मालिक से माली ॥ ५ ॥

कोटि कल्प आयू किस कामा, जो नहिं सुमरे सुखनिधि रामा।
पांच वर्ष आयू भी चंगी, राम नाम रंग में जो रंगी।
सो दिन पल शुभ अवसर सोई, राम भजन में जावत जोई।
राम भजन बिन सोह न अवसर, दीपक बिन ज्यों सोह न मन्दिर।
राम भजन बिन जीवन निष्फल, कह टेऊँ ज्यों जल बिन बादल ॥ ६ ॥

भुवन चतुर्दश का हो राजा, सूर्य सम हो शिर पै ताजा।
बहु राजे शिर आय निवावैं, भान्ति भान्ति की भेट चढ़ावैं।
जहँ चाले तहँ जय जय गाजे, आगे पीछे बाजा बाजे।
बहु लश्कर हो द्रव्य खज़ाना, राम भजन बिन नरक समाना।
तांते राम नाम को भजले, कह टेऊँ धन झूठा तजले ॥ ७ ॥

नर तन में जिहँ भक्ति न कीनी, वृथा उस नर देही लीनी।
विद्या पढ़ जो भक्ति न करहीं, रासभ सम शिर बोझा धरहीं।
होते बुद्धि जो भक्ति न करते, हरिजन धिक् धिक् ताहिं उचरते।
बल पा जिहँ नहिं भक्ति कमाई, तांको निन्दत संत सदाई।
राम भक्ति जिहँ मन में धारी, कह टेऊँ तिस पर बलिहारी ॥ ८ ॥

रे मन राम नाम इक साचा, और जगत है सबहीं काचा।
रे मन राम नाम गुण गाओ, गाय गाय तुम राम समाओ।
रे मन राम नाम सुन महिमा, जांके समसर और न उपमा।
रे मन राम नाम सत् रूपा, सर्व व्यापक सर्व स्वरूपा।
रे मन राम नाम उर धारे, टेऊँ हो भव सिन्धु से पारे ॥ ९ ॥

सब घट माहिं राम को लखले, वैर किसी से ना तुम रखले।
अन्तर बाहर गोविन्द जानो, घृणा भाव न किस में आनो।
राम रूप है सकल प्रानी, बोल न किससे फीकी बानी।
पूरन सब में इक भगवाना, भूल करो ना किस अपमाना।
न्यून अधिक नहिं दृष्टि धारो, कह टेऊँ इक राम निहारो ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

सत्नाम साक्षी सुमर मन, प्रेम सहित दिन रात।
कह टेऊँ जिस सुमरते, सकले विघ्न विलात ॥ २० ॥

दशपदी (२०)

सत्नाम साक्षी में पद तीनों, अर्थ यथार्थ इस विधि चीनो।
तीन काल में जो नहिं नासे, ज्ञान अज्ञान माहिं प्रभासे।
सर्व जगत का है आधारा, सब को प्रत्यक्ष है सद्वारा।
जां बिन कछु ना वस्तु विभासत, वेद कहत सत् से सब भासत।
इक रस सत् पद है निर्बाना, कह टेऊँ तिहँ लखे सुजाना ॥ १ ॥

प्रगट ते अति प्रगट है जोई, ढाप सकत नहिं ताकों कोई।
प्रगट भूमि है पानी पवना, प्रगट अग्नि पुनि रवि शशि गगना।
इन सब ते अति प्रगट योगा, आनन्द मूरति नाम निरोगा।
इन्द्रियों से निज वस्तु विभासे, सब साधन को नाम प्रकासे।
जो अस प्रसिद्ध नाम उच्चारे, कह टेऊँ तिहँ काल न मारे ॥ २ ॥

साक्षी चेतन स्वयं प्रकासी, उभय पक्ष ते रहत उदासी।
तम कारज को जानन हारा, सर्व उपाधि ते रहत न्यारा।
निमत हेतु सृष्टी का आहीं, प्रगट प्रकाश सर्व घट माहीं।
जां बिन चलत न जड़ संसारा, होवत जिस से सब व्यवहारा।
ऐसा साक्षी अनुभव रूपा, कह टेऊँ है ब्रह्म स्वरूपा ॥ ३ ॥

सत्नाम साक्षी सर्व अधारा, निज भक्तों का है रखवारा।
सत्नाम साक्षी मन्तर पावन, हरे दास का आवन जावन।
सत्नाम साक्षी भव जल तारे, कर्म जनित कुल कष्ट निवारे।
सत्नाम साक्षी मुक्ति भण्डारा, मुद मंगल सुख अनन्द अगारा।
सत्नाम साक्षी अभय बनावे, कह टेऊँ ढिग काल न आवे ॥ ४ ॥

सत्नाम साक्षी अगम अडोला, सत्नाम साक्षी अतुल अतोला।
सत्नाम साक्षी अमुल अमोला, सत्नाम साक्षी अखण्ड अबोला।
सत्नाम साक्षी अटल अभोला, सत्नाम साक्षी अक्रिय अलोला।
सत्नाम साक्षी अहनिश ओला, सत्नाम साक्षी अचल अचोला।
सत्नाम साक्षी सुमर सवेला, कह टेऊँ कर जन्म सुहेला ॥ ५ ॥

सत्नाम साक्षी दोष निवारे, जैसे अग्नी लकड़ी जारे।
सत्नाम साक्षी अघ यों खोवे, वस्तर की मल जल जिमि धोवे।
सत्नाम साक्षी दुख यों टारे, जैसे औषधि रोग निवारे।
सत्नाम साक्षी दुष्ट संहारे, ज्यों कुठार तरु को कट डारे।
सत्नाम साक्षी हरे अज्ञाना, कह टेऊँ ज्यों तम हर भाना ॥ ६ ॥

सत्नाम साक्षी नाम निराला, जाप जपे सो होत निहाला।
सत्नाम साक्षी नाम रसाला, को जप पीवे अमृत प्याला।
सत्नाम साक्षी नाम विशाला, जाप जपे को भागों वाला।
सत्नाम साक्षी नित्य नवीना, जाप जपे को बुद्धि प्रवीना।
सत्नाम साक्षी जीवन जन का, कह टेऊँ अवलम्बन मन का ॥ ७ ॥

सत्नाम साक्षी सुमरे जोई, तीन लोक यश पावे सोई।
सत्नाम साक्षी जो जन जपता, नरक अग्नि में सो नहिं तपता।
सत्नाम साक्षी में रति जिसकी, ऋद्धि सिद्ध नव निधि चेरी तिसकी।
सत्नाम साक्षी जोई ध्यावे, सो मन वांछित फल को पावे।
सत्नाम साक्षी है सुख रासा, कह टेऊँ जप श्वासों श्वासा ॥ ८ ॥

सत्नाम साक्षी सुमरो ऐसे, कूंज सुतनि को सुमरे जैसे।
सत्नाम साक्षी जप नित नेमा, मछली का ज्यों जल से प्रेमा।
सत्नाम साक्षी जप चित्त लाए, ज्यों कृपण मन माया ध्याए।
सत्नाम साक्षी रट दिन राती, जैसे पपिहा बून्द स्वान्ती।
सत्नाम साक्षी जप मन मेरे, कह टेऊँ पा सूख घनेरे ॥ ९ ॥

पारब्रह्म के नाम अनन्ता, शास्त्र वेद पुरान भनन्ता।
सब नामनि की महिमा भारी, ऋषियों ने बहु भान्ति उचारी।
तां पर जो गुरु नाम सुनावे, गुरुमुख तांसे प्रीति लगावे।
नाम किसी की निन्द न करहैं, रहित दोष दश नाम सुमरहैं।
इस विधि जो गुरु नाम ध्यावे, कह टेऊँ सो मुक्ती पावे ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

ओम् नाम् उति उत्तम है, सब वेदों का सार।
कह टेऊँ तां सुमर के, पाओ मोक्ष द्वार॥ २१ ॥

दशपदी (२१)

ओम् नाम है सब से आदी, ओम् नाम है परम अनादी।
और नाम है कृत्रिम सारे, आदि ओम् को वेद उच्चारे।
ओम् नाम को वाचक जानो, पारब्रह्म को वाच्य पछानो।
ओम् नाम में शक्ती भारी, ब्रह्मातम की दे लक्ष्य सारी।
ओम् नाम है धुर की बानी, टेऊँ जन्म समय कह प्रानी ॥ १ ॥

ओम् नाम से विष्णू उपजा, ओम् नाम से शंकर निपजा।
ओम् नाम से उपजे ब्रह्मा, ओम् नाम से निकले निगमा।
ओम् नाम से भया पसारा, ओम् नाम से थिर संसारा।
ओम् नाम में लय हो सारा, ओम् नाम से नहिं कछु न्यारा।
सर्व रूप हैं ओम् स्वरूपा, कह टेऊँ ज्यों घट मृद रूपा ॥ २ ॥

ओम् बिना सब सूने मन्तर, दीप बिना ज्यों सूना मन्दिर।
ओम् सर्व का बीज सु मन्तर, ओम् मंगलमय है स्वतन्तर।
ओम् सहित मन्तर आराधे, मन चिन्तित फल सकले साधे।
ओम् नाम सह युक्ति उपासे, आतम विद्या सुतहिं प्रकासे।
ओम् संतों का गोप्य धन है, कह टेऊँ को जानत जन है ॥ ३ ॥

ओम् मन्त्र षट् कर्मी माने, देव ओम् कह पूजा ठाने।
ओम् मन्त्र में जोगी राते, सुन अनहद धुनि अन्तर माते।
परमहंस भी ओम् उपासहिं, लय चिन्तन कर ब्रह्म निवासहिं।
ज्ञानी भी नित ओम् उचारत, लक्षणा से निज रूप निहारत।
ओम् नाम सत्संगी गावत, कह टेऊँ मन शान्ती पावत ॥ ४ ॥

ब्रह्म रूप से ओम् ध्यावे, भ्रम जाल सह मूल नसावे।
तन तज निर्गुण ब्रह्म समावहिं, जनम मरण में फेर न आवहिं।
ओम् उपासन कर सह आसा, ब्रह्म लोक जा करहैं वासा।
कल्प अन्त निज ज्ञानहिं पाए, सहजे आतम माहिं समाए।
ओम् उपासन ऊँच बखानी, टेऊँ करत बन्ध की हानी ॥ ५ ॥

ओम् सिमरनी जो जन फेरे, काल दूत ना तांको हेरे।
ओम् स्वर ऊँचे जो गावे, मात गर्भ में सो ना आवे।
ओम् की महिमा गावे जोई, चार पदार्थ पावे सोई।
ओम् का जो जन श्रवण करहैं, नरक कुण्ड में सो ना परहैं।
ओम् नाम जो निशदिन जापे, टेऊँ सो त्रिताप न तापे ॥ ६ ॥

ओम् रूप जो देखे नैना, तांके चित में उपजे चैना।
ओम् हाथ से लिखहैं जो जन, मन वांछित फल पावे सो जन।
ओम् ओम् लिख धोय जो पीवे, होय निरोगी सो चिर जीवे।
ओम् मन्त्र जो गल में पावे, दूख दरद तांका मिट जावे।
ओम् ओम् जो मुख से बोले, टेऊँ सो ना भव में डोले ॥ ७ ॥

ओम् नाम को नितहिं उचारो, रोम रोम में कर गुंजारो।
ओम् नाम को हिरदे धारो, राजस तामस वृत्ती टारो।
ओम् नाम का अर्थ विचारो, वाच्य त्याग निज लक्ष्य संभारो।
ओम् जाप कर बारम्बारा, पाओ पूरण शान्ति भंडारा।
ओम् जपे पा आतमज्ञाना, कह टेऊँ मेटो अज्ञाना ॥ ८ ॥

ओम् नाम से प्रान उठाओ, ओम् नाम से तिहँ ठहराओ।
ओम् नाम से छोड़ो प्राना, ऐसे सुमरे दोष हटाना।
ओम् नाम जप श्वासों श्वासा, मेटो अन्तकाल जम त्रासा।
ओम् नाम को मन में रटले, चिद जड़ ग्रन्थी को तुम कटले।
ओम् नाम का चिन्तन कीजे, कह टेऊँ अमृत रस पीजे ॥ ९ ॥

ओम् उपासी गुरु को सेवो, ओम् उपासन की विधि लेवो।
गुरु बिन निष्फल मन्तर सकले, कितना सुमरे फल नहिं निकले।
श्रद्धा से गुरु प्रसन्न करले, ओम् नाम ले ताहिं सुमरले।
ओम् नाम से सुरति मिलाओ, परम मोक्ष का काज बनाओ।
ओम् नाम की महिमा भारी, टेऊँ सन्त गुरु वेद उचारी ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

जग में मन्तर बहुत हैं, गुरु मन्तर सम नाहिं।
कह टेऊँ गुरुदेव से, लेकर सुमरो ताहिं ॥ २२ ॥

दशपदी (२२)

जग में मन्तर आहिं अपारा, गुरु मन्तर बिन नहिं निस्तारा।
अन मन्तर बन्धन में डारे, गुरु मन्तर से हो छुटकारे।
अन मन्तर से जाय न भ्रान्ती, गुरु मन्तर से होवे शान्ती।
अन मन्तर नहिं भव से तारत, गुरु मन्तर ही पार उतारत।
तांते गुरु मन्तर उर धरिये, कह टेऊँ दुख मन का हरिये ॥ १ ॥

अन मन्तर जग भय उपजावे, जम किंकर आ चोट लगावे।
गुरु मन्तर से निर्भय चीता, सुर नर मुनि कह धन धन नीता।
अन मन्तर से वश हो भूता, होय दुखी तन रोग निपूता।
गुरु मन्तर वश हो भगवाना, पुनि सेवत जग मान महाना।
गुरु मन्तर जो हृदय ध्यावे, कह टेऊँ सो सहज समावे ॥ २ ॥

गुरु मन्तर बिन पशु तन धारे, कष्ट पाय सो बहुत पुकारे।
गुरु मन्तर से मानुष होवे, गुरु से मिलकर बन्धन खोवे।
गुरु मन्तर बिन दे जो दाना, और योनि सुख भोगत नाना।
गुरु मन्तर से सफले कर्मा, सफला जीवन सफले धर्मा
गुरु मन्तर जो जग नहिं होवे, कह टेऊँ नर बहुता रोवे ॥ ३ ॥

गुरु मन्तर बिन जीव न जागे, गुरु मन्तर बिन रंग न लागे।
गुरु मन्तर बिन ना जम भागे, गुरु मन्तर बिन ना हरि रागे।
गुरु मन्तर बिन ठौर न पावे, गुरु मन्तर बिन भटका खावे।
गुरु मन्तर बिन सफल न श्वासा, गुरु मन्तर बिन हो न विकासा।
गुरु मन्तर बिन जन्म अकारथ, कह टेऊँ यह बात यथारथ ॥ ४ ॥

मन कुंचर सम अति बलवाना, गुरु मन्तर अंकुश प्रमाना।
मन मछली सम है जग माहीं, गुरु मन्तर वन्शी सम आहीं।
मन है काला भीम भुजंगा, वश हो मन्तर मुरली संगा।
मन केहरि सम चरहिं स्वतन्तर, मन्तर पिंजरे हो परतन्तर।
मन वायू वत दह दिश धावे, टेऊँ गुरु मन्तर ठहरावे ॥ ५ ॥

सत्गुरु से जो मन्तर लेवे, शब्द अर्थ में वृती देवे।
मन बुद्धि से नित चिन्तन करहैं, ब्रह्म रूप हो निर्भय चरहैं।
तांकी महिमा कही न जावे, शारद शंकर पार न पावे।
केवल मन्तर लेवे जोई, मनुष्य योनि को पावे सोई।
तांते गुर से मन्तर लीजे, कह टेऊँ तिहँ सुमरन कीजे ॥ ६ ॥

तामस राजस सात्विक मन्तर, वर्तत हैं तिन लोकनि अन्तर।
तामस मन्तर भय उपजावे, घोर नरक में जाय गिरावे।
राजस मन्तर लोभ बढ़ावे, कर्म जाल के मांहि फसावे।
सात्विक मन्तर बन्धन तोड़े, परमेश्वर से वृत्ती जोड़े।
सात्विक मन्तर दे गुरु दाता, टेऊँ आवागमन मिटाता ॥ ७ ॥

चतुर खान के प्रानी जेते, ग्रहे त्यागे स्वासा तेते।
तामें हो सत् शब्द उच्चारा, बूझे कोई गुरु का प्यारा।
प्रथम जो स्वासों को शोधे, सर्व घटों में सो प्रबोधे।
जिस पर गुरु की पूरन दाया, उसने गुह्य भेद यह पाया।
गुरु बिन भेद लखे नहिं कोई, कह टेऊँ यह सन्तनि गोई ॥ ८॥

भेद भाव नहिं जिसमें राई, अहं ब्रह्म ही देत दिखाई।
अहं भाव कछु जिसमें नाहीं, वासुदेव मय जग जिस माहीं।
ममत भाव ना जामें दीसत, सब कछु हरि का जामें पेखत।
ममत भाव हरि में जिस लाखे, हरि बिन और न जामें राखे।
दास भाव जिसमें भरपूरा, टेऊँ पाँचों मन्तर पूरा ॥ ९॥

भेद अभेद भावना धारे, बहुते मन्तर वेद उचारे।
सगरे मन्तर श्रेष्ठ बखाने, एक एक से हैं अधिकाने।
जिसका मन जिसमें अनुरागे, तिस मन्तर में सो नित लागे।
तामें प्रेम भाव जिहँ होवे, बोध भये सो सुख को जोवे।
मन्त्र अभेद से सुरति समाओ, कह टेऊँ जे हित को चाहो ॥ १०॥

॥ दोहा ॥

सत्चित आनन्द आतमा, देह अनातम जान।
कह टेऊँ आतम लखे, पाओ सूख महान॥ २३॥

दशपदी (२३)

सत् चित आनन्द मय है आतम, मिथ्या जड़ दुख रूप अनातम।
पूरण इक रस आतम अविचल, घटत बड़त तन नातम चंचल।
अन्तर आतम बिन आकारा, बाह्य अनातम है साकारा।
तन से संबन्ध न आत्म केरा, आतम असंग वेद ने टेरा।
निर्दुख आतम है अविनाशी, कह टेऊँ तन दुखमय नाशी ।। १ ।।

आतम को नहिं अग्नि जलावे, आतम को ना धरनि दबावे।
आतम को नहिं पवन सुकावे, आतम को ना नीर डुबावे।
आतम को नहिं शस्त्र छेदे, आतम को ना भ्रान्ती भेदे।
आतम को नहिं तस्कर लूटे, आतम कबहूँ बढ़े न खूटे।
आतम ब्रह्म अनन्त अनादी, कह टेऊँ है रहित उपाधी ।। २ ।।

आतम को ना नैनां दरसे, आतम को ना पानी परसे।
आतम को नहिं रसना भाखे, आतम को ना मन बुद्धि लाखे।
आतम को नहिं सुनते काना, आतम को ना जाने प्राना।
आतम को नहिं वृत्ति पछाने, आतम को ना सूंघत घ्राने।
आतम है सब इन्द्रिय अगोचर, कह टेऊँ गुण तीनों ते पर ।। ३ ।।

आतम सब जग माहिं समाना, अग्नि बसे ज्यों बन अस्थाना।
मथने से अगि प्रगट होवे, प्रत्यक्ष तांको सब जग जोवे।
चिद् जड़ का जब करे विवेचन, आतम का तब होवे दर्शन।
दर्शन से सब भ्रान्ति विनाशे, परमानन्द उर में प्रकाशे।
गुरु कृपा से आतम बूझत, कह टेऊँ गुरु बिन नहिं सूझत ।। ४ ।।

आतम को बहु खोजत देवा, पांच ईश खोजत तिहँ भेवा।
तपस्वी योगी साधन ठाने, आतम का तौं मरम न जाने।
सूक्ष्म ते अति सूक्ष्म सोई, गुरु बिन तांको लखै न कोई।
सत्गुरु जिसको भेव बतावे, आतम को सो सहजे पावे।
आतमकांक्षी गुरु को सेवे, टेऊँ सो आतम लख लेवे ।। ५ ।।

आतम पद का सत्‌गुरु दाता, पूरन शिष्य ही तांको पाता।
आतम है मन मन्दिर माहीं, पांच कोष दरवाज़ा ताहीं।
ताला अविद्या का हरि लाया, चाबी सत्गुरू पास धराया।
तन मन धन दे चाबी लीजे, खोल पटल तिहँ दर्शन कीजे।
आतम दर्शन हित तन पाया, कह टेऊँ क्यों ताहिं भुलाया ।। ६ ।।

आतम पद बिन जनम असारा, जीव बिना ज्यों तन बेकारा।
आतम पद बिन दुखमय जीवन, होत दुखी ज्यों मछली जल बिन।
आतम पद बिन पाय न माना, मालिक बिन ज्यों भटकत स्वाना।
आतम पद बिन शान्ति न आवत, वायु से तृण ज्यों थिर ना पावत।
आतम पद बिन महती हानी, टेऊँ बात यह वेद बखानी ।। ७ ।।

आतम पद कर चित निर्लोभा, भुवन चतुर्दश बाढ़े शोभा।
आतम पद दे लाभ अनन्ता, निगमागम यों गावत सन्ता।
आतम पद जो पाय उदारे, सर्व देव नित ताहिं जुहारे।
आतम पद को जो जन देखे, सर्व सृष्टि को सो जन पेखे।
आतम पद सम पद नहिं दूजो, कह टेऊँ आतम को पूजो ।। ८ ।।

तन घर है आतम घर वाला, घर में सोई करत उजाला।
घर वाले से घर शोभत है, घर वाले बिन घर क्षोभत है।
घर वाले से स्वर्ग मकाना, घर वाले बिन घर श्मशाना।
घर वाले से हो घर काजा, घर वाले बिन काज न साजा।
घर वाले बिन घर ना भावे, कह टेऊँ जग साख सुनावे ।। ९ ।।

जगत पदार्थ सब हैं दर्पन, तामें होवै आतम दर्शन।
दर्पन में है मैल न राई, आंखों में मल अविद्या छाई।
ज्ञान अंजन बुद्धि लोचन पाए, नैनों के सब दोष मिटाए।
निर्मल बुद्धि के नैनों से तुम, जहँ तहँ देखो अपना आतम।
सब वस्तुनि में आतम दर्शो, टेऊँ देख देख तुम हर्षो ।। १० ।।

।। दोहा ।।

सर्व जगत है ब्रह्म मय, तिस बिन और न कोय।
कह टेऊँ ब्रह्म भाव से, जगत भाव को खोय।। २४ ।।

दशपदी (२४)

सर्व जगत यह ब्रह्म स्वरूपा, जहँ देखो तहँ आतम रूपा।
ब्रह्म जगत जग ब्रह्म अकारा, कारण के सम कार्य सारा।
नाम बहुत है वस्तू एका, वसन सूत सम जान विवेका।
नाम रूप दो असत् उपाधी, अस्ति भाति प्रिय सहज समाधी।
नाम रूप मय जगत ब्रह्म है, कह टेऊँ नहिं आन भ्रम है ।। १ ।।

निज महिमा में ब्रह्म है स्थित, अखण्ड अनूप असंग गगन वत।
जग मिथ्या है ब्रह्म अधारा, सांप रज्जु सम नहिं कछु न्यारा।
विश्व ब्रह्म का है आभासा, लाल दमक जिमि सर्व विलासा।
पारब्रह्म का जग प्रतिबिम्बा, भेद नहीं प्रतिबिम्ब अरु बिम्बा।
कर्ता से भिन्न संकल्प नाहीं, कह टेऊँ लख अनुभव माहीं ॥ २ ॥

ब्रह्म पवन अगि ब्रह्म अकासा, ब्रह्म धरनि जल ब्रह्म विकासा।
ब्रह्म सूर्य शशि नौ ग्रह तारे, ब्रह्म देव नर दानव सारे।
ब्रह्म जीव तन मन बुद्धि वाणी, ब्रह्म दशों दिश चारों खाणी।
सकल त्रिपुटि हीं ब्रह्म पछानो, अन्तर बाहर ब्रह्महिं मानो।
सर्व ब्रह्म है जान न दूजो, कह टेऊँ अनुभव से बूझो ॥ ३ ॥

सब में एको ब्रह्म समाना, मणिकों में जिम तागा ताना।
नाम रूप की सत्ता न कोई, कहने मात्र है यह दोई।
माटी बरतन माटी मानो, कँचन भूषण कनक प्रमानो।
पवन बिघूड़ा पवन स्वरूपा, सर्व जगत त्यों आतम रूपा।
सब है आतम भेद न लेशा, कह टेऊँ यह गुरु उपदेशा ॥ ४ ॥

कँचन में ज्यों भूषण नाना, ब्रह्म माहिं त्यों जगत बखाना।
सागर में ज्यों फैन तरंगा, ब्रह्म माहिं त्यों जग बहु रंगा।
सीप माहिं ज्यों रूपा भासे, ब्रह्म माहिं त्यों जगत प्रकासे।
दर्पन में ज्यों नँगर सारा, ब्रह्म माहिं त्यों जगत पसारा।
जगत भाव को कल्पित देखो, कह टेऊँ सत् ब्रह्महिं पेखो ॥ ५ ॥

ब्रह्मातम है एक अनूपा, चन्द्र चान्दनी जिमि रवि धूपा।
ब्रह्मातम में भेद न राई, सिन्धु तरंग ज्यों इक दृष्टाई।
कल्पित वाच्य अर्थ को तजले, ब्रह्म रूप आतम को भजले।
वाच्य अर्थ में सकले भेदा, लक्ष्य अर्थ है सहज अभेदा।
निर्भय होके अहँ ब्रह्म बोलो, कह टेऊँ ना मन को डोलो ॥ ६ ॥

ब्रह्म भावना हृदय धारो, जगत भावना तुरत निवारो।
ब्रह्म भावना दृढ़ कर राखो, जीव भावना को तुम नाखो।
ब्रह्म भावना धारन कीजे, देह भावना वेग हरीजे।
ब्रह्म भावना मन वीचारो, भेद भावना को परिहारो।
ब्रह्म भावना निमष न भूलो, टेऊँ ब्रह्म भाव में झूलो ॥ ७ ॥

ब्रह्म भावना जनम मिटावे, भूना अन्न जिमि क्षय को पावे।
ब्रह्म भावना अमर बनावे, काल कराल न दृष्टी आवे।
ब्रह्म भावना द्वैतहिं नाशत, अहं त्वं ना कबहूँ भासत।
ब्रह्म भावना निर्मल करहैं, माया अविद्या की मल हरहैं।
ब्रह्म भावना ब्रह्म लखावे, कह टेऊँ सब ब्रह्म दिखावे ॥ ८ ॥

ब्रह्म भावना सिंह के आगे, भेद भ्रान्ति भेड़ ज्यों भागे।
ब्रह्म भावना उज्वल हीरा, मखी वासना आय न तीरा।
ब्रह्म भावना रवि उजियारा, आवत भागे भ्रम अन्धारा।
ब्रह्म भावना वज्र अकारा, गिरि विकार को छेदन हारा।
ब्रह्म भावना निर्भय करती, कह टेऊँ भव भयता हरती ॥ ९ ॥

ब्रह्म भावना जिसने साधी, तांकी जहँ तहँ ब्रह्म समाधी।
ब्रह भावना दृढ है जांको, ग्रहण त्याग ना रंचक तांको।
ब्रह्म भावना में जो जागे, पाप पुण्य तिहँ लेप न लागे।
ब्रह्म भावना है मन जाहीं, मित्र शत्रु नहिं भासत ताहीं।
ब्रह्म भावना द्वन्द्व गलावे, कह टेऊँ ब्रह्म माहिं समावे ।। १० ।।

।। दोहा ।।

धर्म धरे मन से लड़े, सूरा सो पहिचान।
टेऊँ पाले धर्म निज, गृहस्थी सो परवान ।। २५ ।।

दशपदी (२५)

ज्ञान चिला सुविवेक कमाना, गुरु वचनों का तीर महाना।
हिरदे रण भूमि ले आवे, तक तक शत्रु पै तीर चलावे।
दल युत मन अरि मार मिटावे, निर्भय हो निज राज चलावे।
धर्म आपना पूरन पाले, शिर देवे पर धर्म न टाले।
दे दुश्मन को ना कब पीठा, कह टेऊँ सो सूर अनीठा ।। १ ।।

धर्म न्याय से संचे माया, विद्या पढ़ मन राखे दाया।
शुभ धन दे शुभ पात्र दाना, अतिथी को नित दे सन्माना।
मात पिता गुरु देवनि सेवे, पाप कर्म की गैल न लेवे।
साध संग हरि नाम ध्यावे, नीति सहित व्यवहार चलावे।
पर हित करे होय निर्माना, टेऊँ सो गृहस्थी परवाना ।। २ ।।

फुरने मात्र जगत पसारा, सत् जानत है मूण्ढ गँवारा।
तांके हित निश बासर धावत, धाय धाय कछु लाभ न पावत।
नभ से कर में कछु नहिं आवे, खग छाया नहिं तप्त बुझावे।
मन मोदक नहिं भूख निवारे, बिगत तेज ना राह उज्यारे।
त्यों जग सुख की कर ना आसा, टेऊँ हरि जप पा सुख रासा ॥ ३ ॥

जब लग भोग आस मन माहिं, तब लग शान्ती आवत नाहीं।
विषय वासना को जब त्यागे, तब हरि चरनों में मन लागे।
सकल स्वारथ त्यागे जबहीं, सब दुख भागे निश्चय तबहीं।
जबहीं दुख सुख द्वन्द्व सहारे, तबहीं आनन्द माहिं गुज़ारे।
ब्रह्म ज़ान से सब दुख नाशे, टेऊँ गुरु से ज़ान प्रकाशे ॥ ४ ॥

पांच विकारा सबको लूटे, गुरु कृपा से तांसे छूटे।
मन दुश्मन सबको भरमावे, गुरु कृपा से सो वश आवे।
पांच विषय रस सबको मोहे, गुरु कृपा तिन का बल खोहे।
माया सबको जग में घाले, गुरु कृपा बल तांका टाले।
सर्व विघ्न ते सत्गुरु राखे, टेऊँ जन क्या गुरु गुन भाखे ॥ ५ ॥

सत् सत् है हरि तव प्रतापा, सत् सत् है हरि तेरा जापा।
सत् सत् है हरि तेरे वचना, सत् सत् है हरि तेरी रचना।
सत् सत् है हरि तेरी माया, सत् सत् है हरि तेरी छाया।
सत् सत् है हरि तेरे नामा, सत् सत् है हरि तेरे कामा।
सत् सत् है हरि तेरा कीया, टेऊँ सत् सत् तेरा जीया ॥ ६ ॥

तुमहो सूक्ष्म तुम अस्थूला, तुमहो कारज तुमहीं मूला।
तुमहो शंकर तुम त्रिशूला, तुमहो सर्वज्ञ तुमहीं भूला।
तुमहो वस्तर तुमहीं तूला, तुमहीं झूलत तुम हो झूला।
तुमहीं सरिता तुमहीं कूला, तुम ही तरुवर तुम फल फूला।
तुमहीं इक हो सर्व स्वरूपा, कह टेऊँ तव ऊप अनूपा ।। ७ ।।

तुम हो मणिके तुमहो सूता, तुमहो सृष्टी तुमहो भूता।
तुमहीं जागत तुमहीं सोवत, तुमहीं हसता तुमहीं रोवत।
तुमहो मंगता तुमहो दानी, तुमहीं अज्ञ हो तुमहीं ज्ञानी।
तुमहो दानव तुमहो देवा, तुम हो सेवक तुमहो सेवा।
सर्व रूप हो तुम भगवाना, कह टेऊँ किस सन्त पछाना ।। ८ ।।

कर्म करत जिस कारन कर्मी, धर्म धरत जिस कारण धर्मी।
जां कारन तपस्वी तप साधैं, जां कारन जन इष्ट आराधैं।
जिहँ दर्शन हित देव पिपासू, जांका दर्शन चहत जिज्ञासू।
ब्रह्म दर्शनी सो दरसावे, पूरन श्रद्धा जब मन आवे।
ब्रह्म दर्शनी पढ़ उर धरिये, कह टेऊँ भव सागर तरिये ।। ९ ।।

ब्रह्म दर्शनी ज्ञान बतावे, पांचों भेद भ्रांति मिटावे।
ब्रह्म दर्शनी ब्रह्म दिखावे, सुख स्वरूप में सहज समावे।
ब्रह्म दर्शनी भव सिन्धु तारे, पाप ताप संताप निवारे।
ब्रह्म दर्शनी जो नित पढ़ता, बन्धन काट होय सो मुक्ता।
ब्रह्म दर्शनी धारे जोई, टेऊँ सब फल पावे सोई ।। १० ।।

ओ३म् शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!

ब्रह्म दर्शनी समाप्त

श्री स्वामी टेऊँरामजी महाराज के महिमा के श्लोक

1. निःशोकमानं गतरागद्वेषं, ज्ञानैकसूर्यं जगदेकवन्द्यम्।
अध्यात्मलीनं विनिवृत्तकामं, श्री टेऊँरामं शरणं प्रपद्ये।।

2. यदा हि देशे यवनं प्रकोपात्, सिन्धोस्समीपे बत धर्म हानिम्।।
जनाञ्च सर्वान् व्यथितान् विलक्ष्य श्री टेऊँरामेण धृतोवतारः।।

3. सुरक्ष्य धर्मं त्ववतीर्य भूमौ, प्रजासु व्याप्तञ्च विधर्मी धर्मम्।
विनाशाय तं मण्डल मण्डितेन, प्रकाशितः प्रेम प्रकाश मार्गः।।

4. अष्टांगयोगे च समाहिताय, लोकोपकारे कृतनिश्चयाय।
तद् ब्रह्मतत्वे परिनिष्ठिताय, श्री टेऊँरामाय नमः शिवाय।।

5. शिष्टैश्च सर्वैः परिपूजिताय, स्वर्गाधिपतयेऽपि निःस्पृहाय।
कामादि षड्वर्ग जिताय तस्मै, श्री टेऊँरामाय नमः शिवाय।।

6. योगीन्द्र वृन्दैः परिसेविताय, भक्तार्तिनाशे कृतनिश्चयाय।
सर्वात्म भावे परिनिष्ठिताय, श्री टेऊँरामाय नमः शिवाय।।

7. पूर्णेन्दुशोभा परिपूरिताय, शुद्धाय शान्ताय गतस्पृहाय।
भस्मीकृताशेष निबन्धनाय, श्री टेऊँरामाय नमः शिवाय।।

8. भक्तेश्च मार्गस्य निदर्शकाय, प्रेम प्रकाश मण्डलोद्भवाय।
आचार्य वर्याय वशेन्द्रियाय, श्रीटेऊँरामाय नमः शिवाय।।

सोलह शिक्षायें

दोहा: सोलह शिक्षायें सुनो, सुखदायक हैं जोय।
कह टेऊँ संकट कटे, देत परम गति सोय ।।

1. आदि फल वीचार के तुम, कर पीछे सब काम जी। ये वचन मन मांहि धारे, पाय सुख आराम जी ।।
2. उद्यम कर शुभ कर्म कारण, सीख ये ही सार है। भाग पर कछु नाहिं राखो, वेद ग्रन्थ पुकार है ।।
3. समय का अति कदर करना, खोइये न कुसंग में। जो बचे व्यवहार से, सो सफल कर सत्संग में ।।
4. सर्व से तुम गुण उठाओ,दोष दृष्टी को हरे। देख अवगुन आपना, जो बहुत हैं मन में भरे ।।
5. सर्व जीवों से करो हित, निन्द किसकी ना करो। ना बुरा चाहो किसी का, भाव शुद्ध हृदय धरो ।।
6. जीव किसको ना दुखाओ, दया सब पर कीजिये। राम व्यापक जान सबमें, द्वेष को हर लीजिये ।।
7. समय जोई गुज़र जावे, याद ना तुम ताहिं कर। आने वाले वक्त की भी, चिन्त मन में नाहिं कर ।।
8. जो बनावे ईश्वर तुम, ताहिं पर राज़ी रहो। जा बनी सा है भली सब, यों सदा मुख से कहो ।।
9. आपने स्वारथ लिये तुम, झूठ ना कब बोलना। वचन साचा मधुर हो जब, तबहिं मुख को खोलना ।।
10. शरण तेरी आय जोई ताहिं दे सन्मान जी। यद्यपि वैरी होय तो भी, ना करो अपमान जी ।।
11. और का उपकार कर तुम, छोड़ स्वारथ आपना। लोक पुनि परलोक में कब, होय तुम को ताप ना।
12. धर्म अपने मांहि हरदम, प्यार कर नटना नहीं। सीस जावे जान दें पर, धर्म से हटना नहीं ।।
13. मौत अपना याद कर ले, तिहं भुलावो ना कभी। जान मन में मरण का दिन, निकट आया है अभी ।।
14. धर्मशाला जान जग को, जीव सब महिमान है। मोह किस से ना करो, सब स्वप्न सम सामान है ।।
15. वेद गुरु के वचन पर नित, तुम करो विश्वास जी। अटल श्रद्धा धार मन में, भ्रम कर सब नास जी ।।
16. आदि मन्तर ले गुरू से, जाप जप धर ध्यान को। जगत बन्धन तोड़ विचरो, पाय आतम ज्ञान को ।।

दोहा: ये शिक्षायें याद कर, मन में पुनि वीचार।
कह टेऊँ करनी करे, भव निधि उतरो पार ।।

ओ३म् शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!

आरती आचार्य सद्‌गुरु टेऊँराम जी महाराज

ॐ जय गुरु टेऊँराम, स्वामी जय गुरु टेऊँराम।।
पर उपकारी जगत उद्धारी, तुम हो पूरन काम।। ॐ ।।
जब जब प्रेमिनि निज हित कारण, तुमको पूकारा ।। स्वामी।।
तब तब गुरु अवतार धरे तुम, सबको निस्तारा ।। ॐ ।।
प्रेम प्रकाशी मण्डलाचार्य, मंत्र साक्षी सत्‌नाम।। स्वामी।।
धर्म सनातन के प्रचारक, नीति निपुण अभिराम ।। ॐ ।।
देश विदेश में मण्डली लेकर, पावन दे उपदेश।। स्वामी।।
आत्म रूप लखाया सबको, हरिया ताप क्लेश।। ॐ ।।
पूरण अचल समाधी तेरी, सिद्ध आसन ब्राजे।। स्वामी।।
रूप मनोहर सुन्दर लोचन, देखत मन गाजे।। ॐ ।।
आत्म स्थित वचन के पूरे, योगी इन्द्रिय जती।। स्वामी।।
परम उदारी धीरज धारी, परम अगाध मती।। ॐ ।।
धन धन मात पिता कुल तेरा, धन तव साधु सुजान।। स्वामी।।
धन वह देश जहाँ तुम जन्मिया, धन तव शुभ स्थान।। ॐ ।।
सुर नर मुनि जन हरिजन गुनिजन, गावत गुन तुम्हरे।। स्वामी।।
अंत न पाइ सके नर कोई, महिमा अपर परे।। ॐ ।।
जो जन तुम्हरी आरति गावे, पावे सो मुक्ती।। स्वामी।।
साध संगति को हरदम दीजे, पूरण गुरु भक्ती।। ॐ ।।

छन्द

सर्व स्वरूपं आदि अनूपं, भूमि भूपं भयभाना। अन्त न ऊपं छाय न धूपं, काढत कूपं धर ध्याना।
रहस्यारामं दायक धामं, नित निष्कामं निर्बानी। पाद नमामं निशदिन शामं, श्री टेऊँराम गुरु ज्ञानी।
चावल चन्दन कुंगूं केसर, फूलों की वरखा बरसाओ। नृसिंह गोमुख भेरी बाजा, तबला सुरन्दा झांझ बजाओ।
भर भर दीपक पूर्ण घी से, अगरबत्ती अरु धूप जलाओ। आरति साज करो बहु सुन्दर, सद्‌गुरु की जयकार बुलाओ।

पल्लव

आशवंदी गुर तो दरि आई, तुम बिन ठौर न काई। तूं हरि दाता तूं हरि माता, मेरी आश पुजाईं।
पाइ पल्लउ मैं पेर पियादी, आयसि हेत मंझाई। तन मन धन अर्दास करे मैं, मांगत नामु सनेही।
नामु तुम्हारा साबुन करिसां, धोसां पाप सभेई। कहे टेऊँ गुर लोक तीन में, आवागमन मिटाईं।

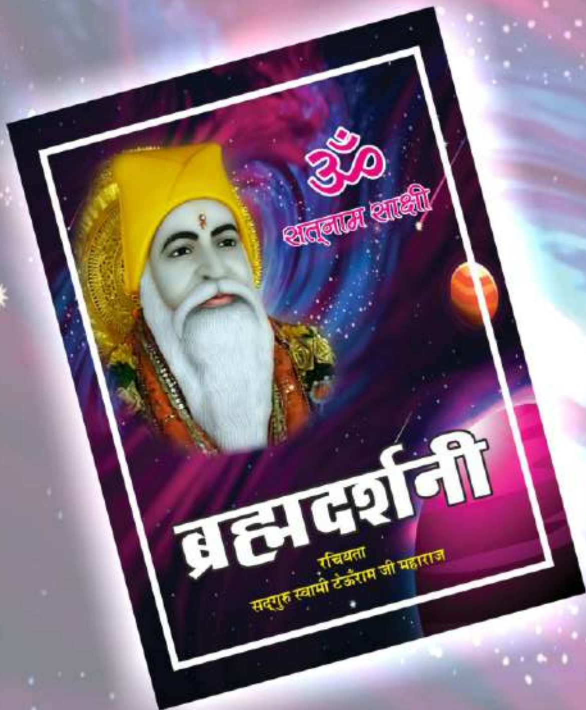

:: प्रकाशक ::

श्री अमरापुर स्थान

एम.आई.रोड, जयपुर • फोन : 0141-2372423, 24

website: premprakashpanth.com • e-mail : amrapurdarbar@yahoo.com

Youtube channel : amrapurdarbarlive.com